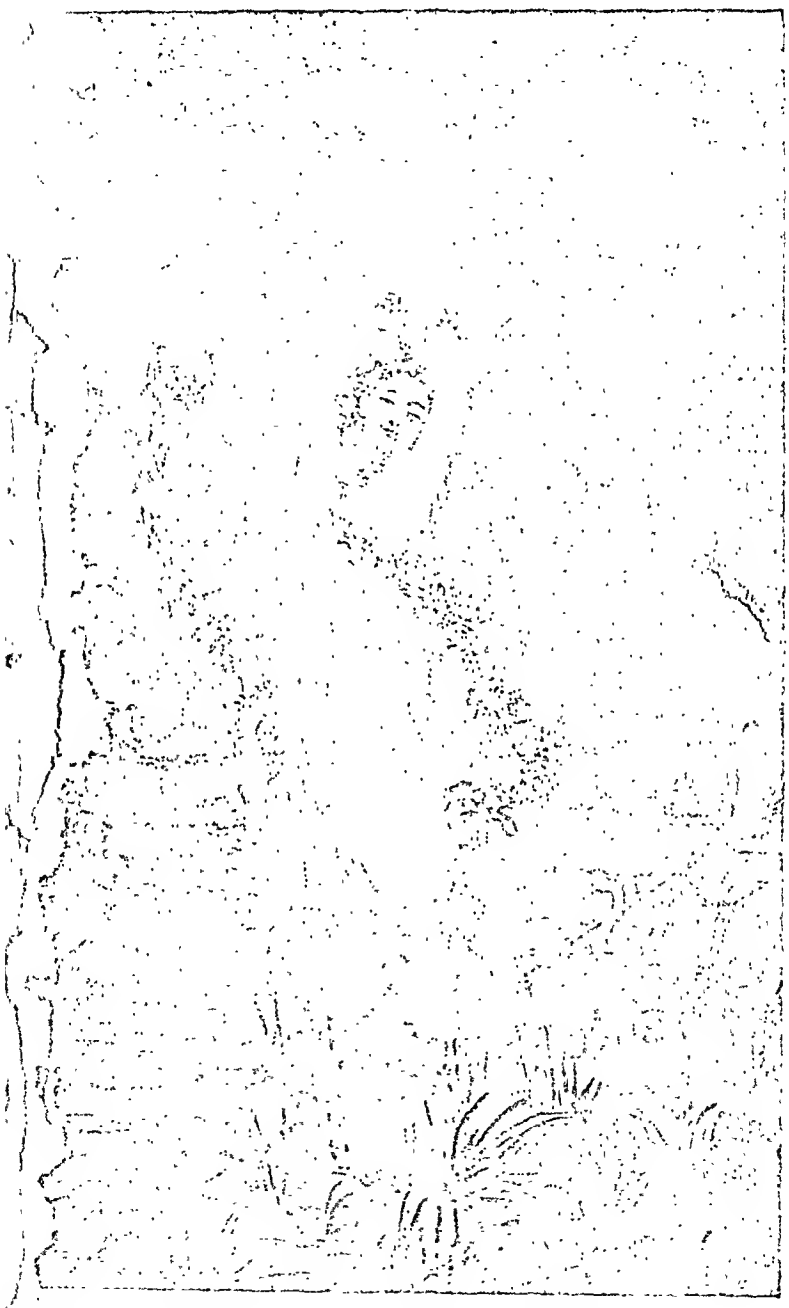

नए द्वानकी

प्रकाशक—उपन्यास-बहार-आफ़िस: काशी-बनारस।

चित्रकूटवर्णन

कई चित्रोंसे सुसज्जित पुस्तकका मूल्य केवल ।।।)

॥ श्री

देवी या दानवी

(हिन्दी साहित्य में अनूठा उपन्यास)

नवाबीपरिस्तान, काश्मीरपतन, शूरशिरोमणि, रौशनआरा, मल्काचांदबीबी, रंग में भंग, फूलकुमारी, वीरवीराङ्गना, कालाचांद, किशोरी, कलावती, चम्पा, माधारानी, भूतों का डेरा, दो खून, लंगड़ा खूनी, चन्द्रशाला, चन्द्रलोककी यात्रा, विलासवार का घोड़ा इत्यादि उपन्यासों के रचयिता काशी निवासी

स्वर्गीय बाबू जयरामदास गुप्तने उपन्यास प्रेमी पाठकों के लिये रचा और शिवरामदास गुप्तने प्रकाशित किया।

The rights of translation & reproduction is reserved.

काशी।

श्रीयुत बाबू सूर्य्यनारायण जी द्वारा जगन्नाथ प्रिंटिङ्गवर्क्स, राजघाट काशी में मुद्रित।

तृतीयबार] अगस्त १९२१ मूल्य ॥)

भूमिका

इस पुस्तक के विषय में हम कुछ भी कहना नहीं चाहते। इसका भार हम अपने प्रेमी-पाठकों ही के ऊपर छोड़ते हैं। वे ही देखें और विचारें कि इस पुस्तक के लिखने में कितना परिश्रम किया गया है और यह पुस्तक हिन्दी उपन्यास साहित्य में बिलकुल अनूठी चीज है या नहीं? इतना कहने पर भी हम अपने प्रेमी पाठकों को धन्यवाद दिये बिना नहीं हर सकते, क्योंकि यह उन्हीं की कृपाओं का फल है जो आज हम इस अनूठे उपन्यास को तैयार कर सके हैं। और यह उन्हीं की दया का फल है जो हम दिन दिन मातृभाषा की सेवा में अग्रसर हो रहे हैं। यदि पाठकों ने इस उपन्यास का परिश्रम के अनुसार आदर किया तो हम उन्हें आशा दिलाते हैं कि इसका दूसरा संस्करण सुन्दर छपाई के साथ सचित्र होगा।

उपन्यास–बहार-आफिस } सर्वसाधारण का कृपाभिलाषी

काशी–२८–१०–०९ } जयरामदास

ग्रंथमाला-रत्नमाला

के अतिरिक्त प्रकाशित उत्तम पुस्तकें।

काश्मीरपतन	॥=)	दो बहिन सचित्र	॥=)
जयश्री-नया संस्करण	।≡)	गुप्तरहस्य सचित्र	॥।-)
किशोरी	।)	शूरशिरोमणि	॥।)
रानी दुर्गावती	=)	कालग्रास	।)
प्रभातकुमारी न० सं०	।≡)	चन्द्रशाला नया संस्करण	।=)
पेरिसरहस्य ५ भाग	१॥-)	लंगड़ाखूनी	≡)
मायारानी	=)	कालाचाँद नया सं०	।-)
आदर्शललना सचित्र	॥)	भयानक भेदिया	।=)
गृहलक्ष्मी	१।)	भूतों का डेरा नया सं०	।)
सुमन-संग्रह	॥-)	दो खून	=)
अनन्त	≡)	नौलखाहार	=)
मोहनी	≡)	स्वर्णकान्ता तीनों भाग	१।=)
राजरानी	≡)	रमा वा पिशाचपुरी	॥।)
पतितपति सचित्र	॥।=)	सुरबाला	॥।)
फूलकुमारी	।)	निराला नकाबपोश	।≡)
देवी या दानवी नया सं०	॥)	भूतों की लड़ाई	-)
उमा-सचित्र न० सं०	१।)	कहकहे दीवार	=)
हमारीदायी	।=)	कलयुग का बुखार	=)
त्रैलोक्यसुन्दरी सचित्र	॥।=)	दर्शनीहुन्डी	=)
निर्धन की कन्या	॥)	हंसाने की कल	=)

पता—शिवरामदास गुप्त—उपन्यास-बहार आफिस काशी बनारस।

हिंदी ग्रन्थमाला की सर्वोत्तम पुस्तकें

पैशाचिक काण्ड सचित्र	२)	नवाबनन्दिनी दो भाग	१॥)
सोने की राख सचित्र	॥=)	दिल का कांटा-सचित्र	१)
नवाबीमहल सचित्र	१)	लालचिट्ठी सचित्र	१।)
भ्रमर-सचित्र रेशमी जिल्द	२)	सुकुमारी सचित्र स०	१॥।)
सादी सचित्र	१॥=)	सादी	१।)
मृणालिनी (बंकिम बाबूकी)	१)	हेमचन्द्र सचित्र स०	१॥=)
विषवृक्ष सचित्र ,,	१।)	शिवाजी का हाथ	१।)
राजदुलारी	॥।)	आरसीवाला	१॥=)
जहरकाप्याला	१)	महेन्द्रमोहनी	१॥=)
कनकलता	॥।=)	रामप्यारी, सजिल्द	१।)
रजनी-नया संस्करण	॥=)	राज-राजेश्वरी	॥।=)
बड़े घर की बड़ी बात-सचित्र	१)	भोजपुर की ठगी	॥=)
रहस्यकुण्ड दो भाग ,,	३।)	रमणी-रहस्य	॥-)
प्रेत-तर्पण-सचित्र(यंत्रस्थ)		प्रवासिनी	१।)
सीताराम-सचित्र-सजिल्द	१॥)	कंकनचोर (यंत्रस्थ)	

रत्नमाला

की अमूल्य पुस्तकें।

सती-महिमा १०चित्रोंसहित	१।)	चिन्ता-१० चित्र और सजिल्द	१
सती-सामर्थ्य ८ चित्र सजिल्द	१=)	दर्पदलन १६ चित्रों सहित	॥।=)
वीरकर्ण रंगीन चित्र स०	१।)	सती-सतीत्व (यंत्रस्थ)	
पत्नी-प्रभाव (यंत्रस्थ)		एकलव्य ४ चित्रों सहित	॥=)
सतीसुकन्या (यंत्रस्थ)		पतिव्रतागांधारी सचित्र	॥।)

उपन्यास—बहार—आफिस काशी बनारस।

॥ श्री ॥

देवी या दानवी ?

पहिली लहर

हमारा किस्सा ।

आज की बात नहीं है; इस उपन्यास के सिलसिले में अठारहवीं शताब्दी के पहिली मद्धे की बात लिखी गई है। इससे पाठकों को दो सौ बरस पीछे पलटना चाहिये। एक दिन मैं (सम्पादक) अपने एक मित्र के साथ काशी के एक प्रसिद्ध कालेज में, जिनका नाम नहीं बताना चाहता हूँ, वहाँ का हाल चाल देखने को गया। संध्या समय जब मैं अपने मित्र के साथ वहाँ टहल रहा था कि मुझे हाथ में हाथ मिलाये दो आदमी टहलते हुए दिखाई पड़े। उनके चाल, ढाल, ढंग, वजह बिलकुल निराले थे। जब मैंने उनके विषय में अपने मित्र से पूछा तो उन्होंने कहा कि, ये कालेज में बड़े अच्छे और प्रथम श्रेणी के लोग हैं। पर इतनेहीं से मुझे तृप्ति न हुई। मैंने सोचा, अच्छा, मौका मिलने पर फिर पूछेंगे।

दूसरे दिन मैं ज्योंहीं सोकर उठा कि मुझे एक चिट्ठी मिली। जिसमें लिखा था कि कल आपने हमें देखकर बड़ा

आश्चर्य प्रगट किया था ! इससे हम अपना किस्सा आपको सुना देना चाहते हैं, जिसे सुनकर आप विश्वास न करेंगे और झूठा समझेंगे, परन्तु आपको जानना चाहिये कि हम झूठ नहीं बोलते हैं और उससे हमे बड़ी घृणा है, क्योंकि अब हम और हमारा पालट लड़का, जो कल हमारे साथ टहल रहा था तिब्बत की तरफ जानेवाले हैं। और अगर हमें वह पहाड़ी मुल्क पसंद आ गया तो फिर हिन्दुस्तान में नहीं आवेंगे। इस लिये रवाना होने के पहिले अपनी बीती आपको दिये जाते हैं। अब इसको प्रकाश करना और न करना आपके अख्तियार में है, आप जो चाहें सो करें।

यह पढ़कर मैंने चिट्ठी के साथ वाले बंडल को खोला जिसमें किस्से का प्रारम्भ इस तरह किया हुआ था।

"मैं काशी का रहने वाला आदमी हूँ। मेरा नाम अचरजसिंह है। जिन दिनों में मैं कलकत्ते के एक प्रसिद्ध कालेज का प्रोफेसर था उन दिनों में आलमसिंह नामक एक नैपाल के रहने वाले मनुष्य से, जिसके साथ उसका एक लड़का और दो नौकर भी थे मेरी दोस्ती होगई। मुझमें और उनमें इतना प्रेम होगया कि मुझे वह अपना सगा भाई जानने और मैं उसे अपना सगा भाई करके मानने लगा। जबतक दोनों एक दूसरे की सूरत न देख लेते किसी को चैन न आता। दोनों एकही मकान में रहते थे। एक ही साथ खाना खाते थे और एक साथ ही काम धाम किया करते थे। यद्यपि मैं एक लंबे चौड़े डीलडौल का आदमी हूँ, परंतु ईश्वर ने मेरी सूरत ऐसी भद्दी और खराब बना दी है कि औरतें मुझे देखकर हँस देतीं और बाज जो बहुतही नाजुक मिजाज होतीं वह डर जातीं। लड़के मुझे लंका का लंगूर, बंदर और हबशी कहकर

खिलखिलाते। इस पर मुझे बड़ा दुःख होता और मैं सोचता. जब ईश्वर ने मेरे शरीर में इतनी ताकत दी और मेरे दिमाग में इतनी विद्या भर दी है कि बड़े बड़े पंडित मुँह छिपाते फिरते हैं तो फिर सूरत भी क्यों न अच्छी बनाई। पर मेरा काम सर्वशक्तिमान की लीलाओं पर रायजनी करने का नहीं है। क्योंकि जहाँ कुछ भी करने की ताकत न हो; जहाँ वश न चले वहाँ बोलना और न बोलना दोनों बराबर है। पर पाठक! आपको जान लेना चाहिये कि सचमुच में मेरा कद ताड़ जैसा. मेरा सिर एक बड़े कद्दू ऐसा, मेरे दाँत शिकारी जानवरों जैसे, मेरा मुँह हबशियों के से और मेरे बाल घोड़े की तरह कड़े और चुभने वाले थे। यद्यपि मैं बदशकल था पर मेरे दिलमें उन लोगों की तरह यह ख्याल नहीं पैदा होता था कि कहने वाले लोग झूठे हैं और मैं चन्द्रमा की तरह खूबसूरत हूँ। इसीसे मैं तमाम उम्र कुवाँरा रहा। मगर किसी स्त्री से विवाह नहीं किया, क्योंकि जब मैं जानता हूँ कि औरतें मुझे देखकर डरती हैं तब फिर उन्हें व्याह के बन्धन में बांधकर उनकी जिंदगी को क्यों किरकिरी करें? मतलब यह कि जिस समय मुझमें और मेरे दोस्त में मित्रता हुई उस समय मैं इस संसार में अकेला था। दूसरा कोई भी इस संसार में नहीं था। मेरे मित्र आलमसिंह जो मेरी जान में इस समय स्वर्ग में आनंद ले रहे होंगे उनका एकलौता लड़का यह साँवलसिंह है। जो मेरा पालट है और मेरे साथ तिब्बत के पहाड़ों में जाने को तैयार है। उन दिनों में जिसको बीस साल के हो गये साँवलसिंह की अवस्था पाँच साल की थी। इसकी माँ उसी समय, जब कि यह दो ही महीने का था मर गई थी और जब यह लड़का एक साल का था उसी समय से मेरा मित्र आलमसिंह

नैपाल को छोड़कर यहाँ चला आया और मेरे पास रहने लगा था। इसी अरसे में मेरी और उसकी इतनी मुहब्बत हो गई कि दोनों एक जीव और दो शरीर थे, दाँत काटी रोटी खाते थे। एक दूसरे पर प्राण भी न्योछावर कर देने को तैयार थे और सदा यही चाहते थे कि यदि जीवें तो दोनों और यदि मौत आवे तो दोनों साथही मर जावें। लेकिन यह बात विधाता को मंजूर नहीं थी, एकाएक आलमसिंह सख्त बीमार पड़ गया और लाख कोशिश करने पर भी छः महीने तक दुःख झेलने के उपरांत मर गया। मरते समय मेरे मित्र ने मुझे अपने पास बुलाया और कहा;—"भाई अम्बरजसिंह !"

मैं–हाँ भय्या, कहो ?

आलम०–जो कुछ तुमने मुझ परदेशी पर एहसान किये हैं वह सीने में खुदे हुए हैं। भाई ! तुम मेरे लिये कृपामय थे, मेरे लिये अन्नदाता थे। हाय ! मेरे शरीर ने विश्वासघात किया, नहीं तो मैं दिखा देता कि पालनेवाले की किस तरह सेवा करनी चाहिये। मुझे अपने मरने का जरा भी शोक नहीं है। दुःख है तो केवल तुम्हारी जुदाई का है। अफसोस ! मेरे मरने से तुम्हारा दिल उकता जायगा। भाई अम्बरजसिंह, तुम अकेले रहने से घबरा जावोगे। और आराम से हाथ धो बैठोगे।

मैं–प्यारे आलमसिंह ! चूल्हे में जाय आराम। जब तुम मेरे पास नहीं रहोगे तो मुझे कुछ नहीं चाहिये। क्याही अच्छा होता कि इस समय मुझे भी मौत आ जाती और मैं तुम्हारा मरना न देख सकता।

आलम०-प्यारे अचरजसिंह ! यद्यपि मैं अभी होश हवास में हूँ, लेकिन अब मैं टिमटिमाता हुआ चिराग हूँ, डूबने वाला नक्षत्र हूँ। अब दोही मिनट में डूब जाने वाला हूँ । चंद मिनट में बुझ जानेवाला हूँ। इसलिये मैं तुमसे एक ऐसी बात कहना चाहता हूँ जिसे आज तक तुम्हें नहीं बताई थी। मेरे लोहे के संदूक में हाथीदाँत की एक संदूकची है। साँवलसिंह को उसे खोलकर उस समय देना जिस वक्त वह इक्कीस साल का हो जावे। बस यही मेरी एक वसीयत और यही मेरी दिली मंशा है।

मैं—क्या हाथीदांत की संदूकची !

आलम०-जी हाँ। उसी संदूक में है। इस किस्से को मैंने इसलिये नहीं बतलाया था कि इसमें कुछ भेद है।

मैं—मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन यदि जीता रहा तो जरूर करूँगा

आलम०—अच्छा ईश्वर मालिक है।

मैं—तुम्हारी तकलीफ देखकर मेरी छाती फटी जाती है और दिलपर साँप लोट रहा है।

आलम०—सावंल कहाँ है ?

मैं—कोठे पर खेल रहा है।

आलम०-जरा उसको भी मेरे पास बुलाओ।

मैंने आलमसिंह के कहने पर साँवलसिंह को जिसकी अवस्था केवल पाँच साल की थी, पास बुलाया। साँवलसिंह एक पतले सा बाँस का घोड़ा बनाकर खेल रहा था। उसे इस बात की जरा भी खबर न थी कि उसका बाप एक ऐसे बिस्तरे पर पड़ा हुआ है जिसपर वह सदा के लिये सो जायगा। जिस समय साँवलसिंह उसके पास आया तो

आलमसिंह ने उसे ललचाई हुई आँखों से देखा और एकाएक उसके नेत्रों में आँसू भर आये। उसने कहा:—

"ऐ दुनिया ! तू दुःखों की खेती है, तू आफतों की दल-दल है, तू तंग और काली घाटी है। तेरे रास्ते में बबूल के बड़े बड़े काँटे बिछे हुए हैं। तुझमें नर्क से भी बढ़कर दुःख है, तेरे में ज़्यादातर वही लोग बसे हैं, जो तेरे तिलस्मी फांसों में फँसकर जीने से बेजार हो रहे हैं। फिर भी मुझे ताज्जुब है कि तेरे दुःखों, तेरी क्लेशों और तेरे आफतोंको, जिसे तू इसमें के रहने वालों के सिरपर गिराती है, भूलकर लोग उस समय जब कि वे तुझे छोड़ने लगते हैं इतना दुःखित और बेचैन क्यों होते हैं ? ऐ तिलस्मी संसार ! बता, तू ने कौनसी ऐसी माया फैला रक्खी है ?"

मैं—प्यारे आलमसिंह ! तुम्हारी तबीयत तो पहिलेही से बहुत खराब है। पर इस समय तुम और भी घबड़ाये जाते हो। साँवलसिंह को यहाँ से भेजदो, क्योंकि तुमको बड़ा क्लेश हो रहा है।

आलम०—जैसी तुम्हारी मरजी।

मैं—बच्चे ! जाओ खेलो।

आलम०—भाई !

मैं—कहो।

आलम०। कहाँ हो ?

मैं—प्यारे ! आँखे खोलकर देखो। तुम्हारेही पास तो बैठा हूँ !

आलम०—मुझे एकबार अपने साँवल का मुँह चूम लेने दो।

मैं—(ठंढी साँस भरकर] बच्चा साँवल ! जा अपने बाप को प्यार कर लेने दे।

साँव०—तोता बुलाऊँ ?

मैं—हाँ मुँह के साथ मुँह लगाकर तोता बुलाओ।

साँवलसिंह मेरे कहनेके अनुसार, अपने बाप के गले लगकर चिमट गया। कलेजे के टुकड़े को गले से चिमटतेही आलमसिंह के दिल पर ऐसा असर हुआ कि उसका प्राण-पखेरू उड़ गया। गला तो उसका पहिले ही से फँसा हुआ था, पर वह बड़ी कड़ाई से बोल रहा था और दिल को सम्हाले था, पर बेटेको गले लगते ही उसकी कड़ाई, जिसके द्वारा वह बोल रहा था, हाथ से निकल गई। और वह सदा के लिये सो गया।

आलमसिंह के मरनेका मुझे इतना दुःख हुआ कि वह बयान के बाहर है। कई दिनोंतक मैं बिना दाना पानी मुंह ढाँके पड़ा रोता रहा। सचमुच! इस संसार की माया बड़ी प्रबल है। इसमें ऐसी सामर्थ्य है जिसका बयान नहीं हो सकता। आखिरकार तबीयत सम्हलतेर सम्हल गई चाहे संसार में किसी से कितनी ही मुहब्बत क्यों न हो, पर कोई किसी के लिये आज तक मरता नहीं देखा गया। आदमियों में तो यह हिम्मत नाम को नहीं है। किंतु हाँ, हमारे आर्यावर्त की स्त्रियों में जिन्हें आजकल नई शिक्षा के लोग बेवकूफ और अशिक्षित कहते हैं बड़ा साहस भरा हुआ है। वे बड़ी उमंग और प्रसन्नता से पति के साथ जलकर राख हो जाती हैं। बरन् ऐसा करना वे अपना प्रधान धर्म्म और सौभाग्य जानती हैं।

दूसरी लहर ।

हाथीदाँत की संदूकची ।

आलमसिंह को मरे हुए आज सोलह साल हो गये । वही साँवलसिंह जो अपने पिता की मृत्यु के समय केवल पाँच वर्ष का था, आज इक्कीस वर्षका रोबीला जवान हो गया। साँवलसिंह ऐसा सजीला और छबीला जवान था कि लोग उसकी खूबसूरती के देखने की ताव न ला सकते थे । देखने में मैं संसार की दृष्टि में जैसाही बदसूरत था, और औरतें जिस प्रकार मुझे देखकर नाक सिकोड़ती थीं उसी प्रकार साँवलसिंह खूबसूरत था और स्त्रियाँ देखकर उसपर लट्टू हो जाती थीं । जब कभी साँवलसिंह गाड़ी में मेरे साथ सवार होकर सैर को जाता तो लोग देखकर कहते कि साँवलसिंह संसार की खूबसूरती का और आलमसिंह दुनियाँ की बदसूरती का नमूना है । साँवलसिंह जिस प्रकार सुन्दर था उसी प्रकार बुद्धिमत्तर भी था । इक्कीस ही वर्ष की अवस्था में उसने महाविद्यालय की सर्व उच्च परीक्षा को प्रथम श्रेणी में पास किया । अपने बाप के मरने के समय साँवलसिंह सिर्फ पाँच ही वर्षका था, इसलिये उसको अपने बाप की शकल तक याद न थी । वह मुझे अपने सगे बाप की तरह जानता और मैं भी उसको खास लड़के की तरह पालता था । जिस समय साँवलसिंह पूरे इक्कीस वर्ष का हो गया और बाईसवें में उसने पैर रक्खा

तो मैंने उसको अपने कमरे में बुलाया। और उस संदूकची को लोहेके बक्ससे निकाला। उसकी (संदुकची की) ताली भी उसके साथही बँधी हुई थी। संदूकची को मैंने साँवल-सिंह के हाथ में देकर कहा कि इसको खोलो। साँवलसिंह ने भी मेरे कहने के अनुसार उस संदूकची को, कई रंगों से रंगी हुई ताली द्वारा खोला। उसमें से एक ताँबे का पत्र निकला। जिसपर महीन कलम से संस्कृत भाषा में नीचे लिखी इबारत लिखी हुई थी:—

"ऐ प्यारे लड़के! मेरा नाम धाराङ्गना है। मैं राज्य नैपाल के वंश से हूँ। मेरे पतिका नाम जो तेरा बाप था देवसिंह है। मुझे और तेरे बापको कई कारणों से देश निर्वासन हुआ। बहुत दिनों से देशाटनके लालसा की आग भी मेरे दिलमें धड़क रही थी। उधर वे लोग हम दोनों को सिसर ले गये और वहाँ से एक डोंगी में बैठाकर नील नदी में छोड़ दिया। दो तीन दिन तक मेरी डोंगी बराबर हवा के रुखपर बहती गई। चौथे दिन एक भारी तूफान आया, जिस से साथ के जितने नौकर चाकर थे सब डूब मरे। केवल मैं और तेरा बाप जीते बचे। जिसका कारण यह था कि मैं जादूगरी में सामरी देवी और जंगमजादू को भी सौ बरस तक पढ़ा सकती थी। पाँचवें दिन जब तूफान से आस्मान साफ होगया तो मैंने अपनी डोंगी को एक तरफ किनारे पर फँसी हुई पाया। वहाँ से मैं और मेरा पति जादू की ओर से निकले और आधी मील का रास्ता तय करके एक पहाड़ की गुफा के पास पहुंचे। इस गुफा का मुंह हबशियों की तरह था। किसी जमाने में यहाँ एक शहर बसा हुआ था। पर अब वहां खँडहर ही खँडहर है। इस नगर के

निवासी आदमखोर लोग हैं। वे हम दोनों को अपनी रानी के पास ले गये जो बड़ी जादूगरनी है। जिसने जादू के जोर से इतनी ताकत बढ़ा ली है कि वह मर नहीं सकती और उस "दानवी" को भविष्य का हाल मालूम हो जाता है। जिस समय उस जादूगरनी " दानवी " जो खूबसूरती में " देवी " के समान थी, की दृष्टि मेरे पति यानी तेरे बाप ' देव" पर पड़ी तो वह धक्क से रहगई और उसने कहा कि ' देव ' तू मेरे साथ विवाह करले और यह जो तेरे साथ की औरत है, इसे मार डाल। मेरा पति देवसिंह यद्यपि इस महिमामयी से बहुत डरता था, किन्तु उसने उस की (देवी या दानवी की) बात को मंजूर न की। फिर वह रानी हम दोनों को एक बड़े भयानक रास्ते से एक ऐसी गुफा में ले गई, जहाँ एक बूढ़ा आदमी मरा पड़ा था। इस जगह उसने मुझ को जिंदगी का मीनार दिखलाया। इस जगह बिजली कूद रही थी। बादल गरज रहे थे। इसी जगह उसने आग के अंगारों और लपटों में नहाया और फिर कुशलपूर्वक आग से निकल आई। उस समय वह आगे से भी हजार दरजे बढ़कर खूबसूरत हो गई। फिर उस (देवी या दानवी ?) ने कसम खाई और तेरे बाप से वह बोली कि "देव ! अगर तू अपनी स्त्री को कतल कर दे तो मैं यहीं तुझको भी ऐसाही कर दूंगी कि तू कभी नहीं मरेगा। यदि तू अमर होना चाहता है तो इस औरत को मारकर मेरा कलेजा ठंडा कर।" तेरे बाप ने उसकी बातें सुनीं पर उसको मंजूर न किया। आखिरकार वह दानवी दिवानी हुई और उसने जादू से तेरे बाप को मार डाला। पर उसका काम तमाम करके वह बहुत पछताई, बहुत

रोई, बहुत पीटी। आखिर तेरे मृत बाप की लाश उठाकर ले गई। उसकी मंशा तो यह थी कि मुझे भी मार डाले, पर मैं भी जादूगरनी हूँ। इससे वह मुझे न जीत सकी। फिर उसने मुझे नदी के किनारे भेज दिया जहाँ से मुझे एक जहाज कलकत्ते ले आया। वहाँ से फिर मैं नैपाल को चली गई। जब मैं नेपाल में पहुँची उस समय गर्भवती थी, तू ही मेरे पेट से पैदा हुआ।"

"ऐ प्यारे लड़के! अब मैं बीमार हूँ और इस असार संसार को छोड़कर जानेवाली हूँ। इसलिये कुल हाल इस ताम्रपत्र पर लिखकर छोड़े जाती हूँ। जिसमें तू जवान हो कर अपने बापका बदला ले। प्यारे लड़के! यदि यह काम तुझसे न हो सके तो फिर अपने वंश को इसकी वसीयत कर देना। ताकि मेरे वंश का कोई न कोई उस दानवी से बदला लेवे। यह कुल हाल मेरी आँखों का देखा हुआ है। मैं झूठ नहीं कहती हूँ। जो कुछ मैंने लिखा है वह बिलकुल सही है और इसके एक अक्षर भी झूठ नहीं है।"

इस ताम्रपत्र के साथ एक पत्र आलमसिंह का भी था जिसमें यह लिखा था:—

"बेटा साँवलसिंह! अभी तेरी उम्र कुल पाँच साल की है। और मुझे मौत का हुक्म मिल गया है। यह संदूकची हमारे घराने में दो हजार साल हुए कि परम्परा से चली आती है। यदि तुझ से वाराङ्गना की वसीयत पूरी हो सके तो तुझसे बढ़ कर दूसरा कोई भाग्यवान नहीं हो सकता। यदि तू अपने में इतनी सामर्थ्य न रखता हो तो इसी तरह अपने लड़के को वसीयत कर देना।"

जिस समय इस ताम्रपत्र का मजमून पढ़ा जा चुका तो मैं साँवलसिंह को लक्ष करके बोलाः--

"साँवलसिंह ! इसके विषय में तुम्हारी क्या राय है ?"

साँवल०-पहिले आप बतलाइये कि आपकी क्या राय है?

मैं-यह ताम्रपत्र तो सचमुच में दो हजार बरस का लिखा हुआ है ,पर वाराङ्गना के दिमाग में, जिस समय उसने इसको लिखा था जरूर खलल था। इसमें कोई संदेह नहीं कि अफ्रीका में जरूर ऐसी गुफा जिसकी शकल हबशियों के चेहरे की तरह हो, होगी। इसमें भी कोई शक नहीं कि उस गुफा के पास दलदल होगी। और यह भी बहुत ठीक है कि वहाँ मनुष्य भक्षी लोग रहते होंगे। पर मुझको इसका जरा भी विश्वास नहीं होता कि वहाँ कोई "देवी या दानवी" होगी।

इस समय साँवलसिंह के वे दोनो नवयुवक नौकर जिनको कि वह नैपाल से साथ लाये थे जिनमें एक का नाम छतरलाल और दूसरे का नाम बहादुरलाल था, वहीं मौजूद थे। ये दोनो साँवलसिंह को बड़ा मानते और प्रत्येक समय उसे अपनी आँखों से दूर नहीं होने देते थे। इससे उनकी राय लेना उचित जानकर मैंने एक से पूछाः--

"क्यों बहादुरलाल ! तुम्हारी इसमें क्या राय है ?"

बहा०—क्या कहें। कुछ अक्ल काम नहीं करती है।"

छत०—मेरी जान में जो कुछ इस ताम्रपत्र में लिखा है वह बिलकुल ठीक और सही है।

मैं—अरे तू क्या कहता है ?

छत०-साहब ! संसार में कोई काम या चीज असम्भव नहीं है।

मैं—यह कहानी प्रकृति के विरुद्ध है।

छत०—अहा! प्रकृति में क्या सामर्थ्य है।

मैं—निस्सन्देह!

छत०—संसार में कोई चीज असम्भव नहीं है। आप ही कहिये प्रकृति क्या सब जगह एक समान रहती है? क्या ब्रह्माजी कमल के डोंडी से पैदा नहीं हुए हैं? क्या जर्मान से बहुत सी हरियालियाँ बिना बोये उत्पन्न नहीं होतीं?

मैं—यह सब दूसरी बात है।

छत०—साहब! आप क्या कहते हैं? आदमीकी बुद्धि घिरी हुई रहती है। संसार में एक से एक चीजें पड़ी हुई हैं। उन्हीं को जब कभी आप देख लेते हैं तो वे अनोखी जान पड़ती हैं। और जहाँ वैसी वैसी दो चार चीजें आप ने देख लीं तहाँ उसका अनूठापन जाता रहता है।

मैं—हाँ यह सब तुम ठीक कहते हो। पर जादू और जादूगरी कोई चीज नहीं है।

छत०—आपसे मैं ज्यादा बहस नहीं कर सकता। इस से यही अच्छा जान पड़ता है कि शायद आपही का कहना ठीक हो!

मैं—साँवलसिंह। इसमें तुम्हारी क्या राय है?

साँव०—इसमें मैं कोई राय देना नहीं चाहता। शायद आप दोनोंका कहना ठीक हो। पर मैंने यह निश्चय कर लिया है कि इस बारे में अच्छी तरह छान बीन करूंगा। यह आप लोगों को अख्तियार है कि चाहे आप मेरे साथ चलें या न चलें।

मैं—प्यारे! यह क्या कहते हो।

साँव०। चचा जी! मेरा जो इरादा है वही कहता हूँ।

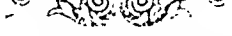

मैं—क्या सचमुच तुम अफ्रीका जाना चाहते हो ?

साँव०—इसमें हानि ही क्या है ?

मैं—इतनी तकलीफ उठा सकोगे ?

साँव०—निस्सन्देह ।

मैं—वहाँ जाकर क्या करोगे ?

साँव०—यदि कुछ भी न कर सकेंगे तो कम से कम सैर तो हो जावेगी ।

मैं—अगर सैर ही का ख्याल है तो चलो मैं भी चलूंगा ।

साँव०—चचाजी ! मुझे आपके प्रेम से ऐसाही भरोसा था ।

मैं—प्यारे ! भला यह कब हो सकता है कि मैं तुम्हे छोड़ूँ ।

वहा०—चाहे इधर की दुनियां उधर हो जाय पर मैं तो जरूर चलूँगा ।

कृत०—यदि मुझको अकेले छोड़ जावोगे तो मैं आत्मघात करूंगा ।

मैं—चलो भाई चलो; सब लोग चलें ।

साव०—फिर जल्दी ही कूंच करना चाहिये । तैयारी करते जाओ ।

———०:*****:०———

तीसरी लहर।

तूफान।

साँवलसिंह को सैर सपाटे की बेहद शौक थी। जिस समय उसने सुना कि मैं भी यात्रा के लिये तैयार हूँ, उसकी बाँछें खिल गईं और वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसी दिन से सफर की तैयारी शुरू हो गई। मैं, छुतरलाल, बिहारीलाल और साँवलसिंह चारों यहाँ से सीधे कलकत्ते को रवाना हुए और फिर वहाँ से एक जहाज पर सवार होकर जंगबार के लिये चल पड़े।

राम राम करके तीन दिन पर जंगबार पहुँचे। फिर वहाँ से एक पनसूई पर चढ़ गुफा की खोज के लिये रवाना हुए। इस डोंगी में मैंने बंदूक, वक्त पड़ने पर काम आनेवाले दूसरे दूसरे हथियार और कई सप्ताह के लिये दाना पानी भी रख लिया था। इस पनसूई पर मेरे साथ के आदमियों के सिवाय आठ मल्लाह भी थे जो उस तरफ से बड़े जानकार थे और उनको मैंने बड़ी छानबीन के बाद साथ ले जाने के लिये चुना था। सवेरे से जब कि मैं सवार हुआ था शाम तक बड़ी अच्छी तरह से डोंगी पूर्व की तरफ चली जाती थी। इतनेही में सूर्यभगवान अस्त हो गये, चारों तरफ अंधेरा छा गया। साथ ही साथ निद्रादेवी ने भी सब को अपनी गोद में ले लिया और सबके सब सो गये। एकाएक एक भयानक शब्द होने से सबके सब जाग पड़े। जब मैं आँख मलता हुआ उठ बैठा तो देखा, चारों तरफ अँधेरा

छाया हुआ है। बिजली कड़कड़ा रही है। हवा बड़ी ही तेजी से बह रही है और मल्लाहों के चेहरे के रंग उड़ गये हैं। जब मैंने मल्लाहों से पूछा कि क्या तूफान आने वाला है ? तो सभों ने डरती हुई जबान में उत्तर दिया, तूफान कैसा, यह प्रलय की निशानी है। इसमें समुद्र का पानी उथल पुथल हो जायगा। हम लोगों में से कोई भी जीता नहीं बच सकता। इस तरह का तूफान साल में एक बार आता है। इसका कोई बंधा समय नहीं है। इससे समुद्र और नदी का पानी उथल पुथल हो जाता है और कोई चीज पानी की तह पर नहीं रह सकती है। यह भयानक हवा के झोंके जो अभी हमारी डोंगी को थपेड़े दे रहे हैं, थोड़ी देर में इतने प्रबल हो जायंगे कि डोंगी को टुक टुक कर डालेंगे। यह कह कर मल्लाह एक दूसरे के गले से लगकर रोने लगे और दुहाई ! दुहाई ! कह चिल्लाने लगे। सचमुच ही, थोड़ी देर के बाद समुद्र में बड़ा हल्ला सुनाई पड़ने लगा, लहर आस्मान तक की खबर लाने लगी। हवा में इतनी चिल्लाहट सुनाई पड़ने लगी, मानों हजारहों हाथियाँ जंगल में चिंघाड़ें मार रहे हैं। बादल की गरज, हवा का सन्नाटा भरने, और पानी के चिल्लाने की आवाज से कान के परदे फटे पड़ते थे। सचमुच में वह तूफान नहीं प्रलय था। मेरी डोंगी के मल्लाह जिन्हें मैं बड़ा तजरुबेकार समझता था ऐसे बदहवाश हुए कि सब के सब पानी में कूद पड़े और बेपता हो गये। जब मैंने देखा कि डोंगी पर एक भी मल्लाह नहीं है तो साँवलसिंह की तरफ दृष्टिपात किया, देखा, वह विचारा भी हैरान हो रहा है कि क्या था और क्या हो गया। बहादुरलाल भी बदहवाश हो रहा था। पर लुतरलाल के

औसान ठीक थे। और वह हँसी मजाक की छेड़ छाड़ किये जाता था। मैंने कहा,—"देखो! इन मल्लाहों ने क्या किया।"

साँवलसिंह ने उत्तर दिया,—"यह तो परले दरजे के डरपोक निकले।"

वहा०—सचमुच कमाल दरजे के नामर्द थे।

छत०—जो कुछ इन्होंने किया बहुत ठीक किया।

मैं०—वह कैसे?

छत०—वे तरी के रास्ते से बैकुण्ठ को गये हैं।

मैं०—तुम जो चाहो सो कहो।

छत०—वे सब अभी से इस लिये चले गये हैं कि मकान खाली कराये रखें, क्योंकि अब हम लोग भी जाने वाले हैं।

मैं—छतरलाल! भला कभी तो अपनी हँसी कोरोका करो।

छत०—भला, हमको मल्लाहों की क्या जरूरत थी।

मैं—(साँवलसिंह और बहादुरलाल से) इस बाहो छतरलाल की बातों का ख्याल न करो और कुछ हाथ पाँव हिलाओ। शायद ईश्वर की कृपा हो जाय और सब लोग बच जावें।

छत०—इस तरफ से आप इतमिनान रखें।

मैं—तू तो बिलकुल सिड़ी हो गया है।

अभी मैं छतरलाल पर बेवक्त हँसी के लिये बिगड़ ही रहा था कि एक भारी लहर उठी और उसने डोंगी को चारों तरफ से ढंक लिया। साथ ही हवा का एक झोंका आया और वह पनसूई से सारा सामान बहा ले गया। इस समय ऐसा जान पड़ता था कि समुद्रराज मेरे और मेरे साथियों पर बिगड़ गये हैं और पानी के थपेड़ों से डोंगी को एक तरफ

फेंक रहे हैं। या यों कहो कि नर्क कुंड से कोई दैत्य भाग कर आया है और सामने मेरी डोंगी को पा दाँत पीस पीस कर ऊपर को उछाता और फिर उसे पानी की तह पर पटक देता है। छतरलाल यद्यपि हँसी मजाक से बाज नहीं आता था; पर चुप चाप नहीं बैठा हुआ था। वह पनसूई के सिर पर बैठा हुआ अपने यत्नभर डोंगी को लहरों से बचाने की चेष्टा कर रहा था। इतने में साँवलसिंह की कम्बख्ती हो आई तो वह उठ खड़ा हुआ। इस समय डोंगी नाच रही थी और उसमें भूचाल आया हुआ था। भला ऐसे समय में वह कब खड़ा रह सकता है। अभी वह तनकर खड़ा भी न होने पाया था कि हवा के एक तेज झोंके ने उठाकर उसे पानी में फेंक दिया और बिचारा लहर में कहीं का कहीं हो गया।

उसकी यह दशा देखकर मेरा तो जी डूब गया; आँखें बंद हो गई। बहादुर लाल जिसे उससे बड़ी मुहब्बत थी, सिर पीटने लगा। पहिले तो मैंने समझा कि मैं सपना देख रहा हूँ। पर जब बहादुरलाल के रोने चिल्लाने की आवाज कान में आई तो मैं समझा कि सचमुच प्यारा साँवलसिंह डूब गया। इससे मेरे रहे सहे हवास भी जाते रहे। कलेजा फाड़कर एक भयानक चीख मेरे मुँहसे निकल गई। उसवक्त ऐसा जान पडता था जैसे कोई मेरा कलेजा निकाल रहा है। अभी मैं इसी विपद में फँसा हुआ था कि दूर से एक आनेवाली भारी लहर में कोई काली चीज आती दिखलाई पड़ी। इस लहर को देखकर छतरलाल चिल्ला उठा कि देख जाइये: यह मौज भी उसी प्रकार की आ रही है जो

साँवलसिंह को ले गई है। अभी छतरलाल की चिल्लाहट मेरे कानों में गूंजही रही थी कि आनेवाली मौज ने उस काली चीज को, जिसे वह उठाये ला रही थी मेरी डोंगी में फेंक दिया। फिर करीब था कि हवा का तेज़ झोंका उसे उठाकर फिर पानी के हवाले कर दे कि ईश्वरशक्ति से मैं बिजली की तरह लपक कर उससे चिमट गया और मैंने उसे फिर पनखुई में जाने न दिया।

अहा! यह आनेवाली काली चीज़ साँवलसिंह था, जिसे लहर ने जिन्दा या मुर्दा उठाकर फिर से मेरी डोंगी में डाल दिया। तमाम रात मैंने बड़ी मुश्किलों से काटी। न तो डोंगी डूबती थी और न मुझे इसकी कोई सूरत ही दिखलाई पड़ती थी कि इस तूफान से बच निकलूँगा। आखिरकार पिछले पहर तूफान की तेज़ी घटने लगी। सवेरा होने के पहिले आसमान भी धीरे धीरे साफ हो गया। साथ ही पानी भी धीरे धीरे थमकर साफ बन गया।

इस समय तक मुझको यह खबर न थी कि साँवलसिंह जीता है या मर गया है। तूफान के भयानक चित्कार के बंद होते ही साँवलसिंह ने भी आँखे खोलदीं और अकचका कर पूछा कि क्या सवेरा हो गया? इतना कहने के बाद वह पुनः सो गया। मेरे दिल में इससे ढाँढस हुई और मैं सर्वशक्तिमान का गुन गान करने लगा। इसके थोडी देर बाद आस्मान पर लाल चादर बिछ गई। सूर्यभगवान हिमालय की चोटी पर खड़े होकर समुन्द्र के गर्भ, पहाड़ों की चोटियों और बड़े बड़े वृक्षों की फुनगियों पर अपनी किरणों को फैलाने लगे।

चौथी लहर

हवशी का सिर ।

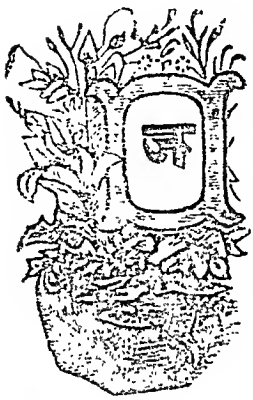

जब सूर्यभगवान आस्मान पर तेजी के साथ चमकने लगे तो दूर से एक पहाड़ की एक चोटी दिखलाई पड़ी । यद्यपि वह एक साधारण बात थी, पर उस चोटीको देखतेही मेरे शरीर में सनसनी सी शुरू हो गई । इस चोटी की सूरत बिलकुल हवशी के सिर और चेहरे की तरह थी । यह चेहरा हवशियों से भी भयानक और डरावना था । हवशी के चेहरे और इसमें जरा भी फर्क न था । हवशियों ही के चेहरे की तरह इसमें मोटे मोटे होंठ उठे हुए थे । उन्हीं की तरह गाल और चिपटा नाक भी दिखलाई पड़ा, जो सूर्यभगवान के प्रकाश से अच्छी तरह दृष्टि गोचर हो रहा था ।

जब साँवलसिंह जागा तो उसने भी इस भयानक हवशी के मुँह वाली गुफा को देखा । मेरी तरह वह भी चकित होने लगा; फिर बोलाः—"वह देखिये हवशी का सिर है ।"

मैं—उसे मैं पहिलेही से देख रहा हूँ ।

साँव०—अब कोई शक नहीं रहा कि ताम्रपत्र की कोई भी लिखावट गलत हो ।

मैं—अभी तक मैं तुमसे सहमत नहीं हूँ । मान लो कि यह वही सिर है । फिर भी तो इससे कुछ साबित नहीं होता ।

साँव०—वह देखो घाट !

मैं—घाट क्या. तुम्हें तो यह रानी भी दिखलाई पड़ने लगेगी।

साँव०—जरा अपने चारों तरफ तो देखिये।

अब जो मैंने अपने चारों तरफ देखा तो सचमुच मुझे एक बड़े शहर के खंडहरात दिखलाई पड़े। उसे देखकर मैं बड़ा हैरान हुआ कि सचमुच ताम्रपत्र की लिखावट झूठी नहीं है। फिर मैं अपनी डोंगी को उत्तर की तरफ ले गया, दो ही मील जानेपर पनसूई दलदल के पास पहुँच गयी वहाँ मैंने देखा कि सैकड़ों घड़ियाल और मगर पानी से निकल कीचड़ पर बैठे देह गरमा रहे हैं। जब दोपहर हुई तो मैंने अपनी डोंगी को ठहराया। दलदल से ऐसी बदबू आ रही थी कि दिमाग फटा जाता था। इससे सबने थोड़ी थोड़ी कुनैन खाली कि कहीं बुखार न आ जाय। पानी के एक बड़े घास के जड़े के पास डोंगी खड़ी करके सब लोग धूप से बचनेकी तदबीर सोचने लगे। इतने में एक बारहसिंहा पानी पीने के लिये वहीं आया और मैंने बंदूक से उसका शिकार कर उसे डोंगी में खिचवा लिया। रात के समय तीन फरलाँग की दूरी पर एक झील में जो इस नद से बन गई थी, मैंने डोंगी का लंगर डाला। पर अंधेरा होते ही हजारों मच्छर और डाँस आ धमके। अगर चारों आदमी अपना अपना शरीर कम्बल से ढक न लेते तो यकीन था कि वे बदन में खून के एक बून्द भी न छोड़ते। इस सैर में जो जो खतरे पेश आये इनका मुझे गुमान भी न था। पर कल रात के तूफान और सारे दिन की थकावट के कारण चारों आदमी कम्बल ओढ़कर लेटे और सो गये। सवेरा होने के पहिलेही शेर और शेरिनी ने गरज कर सब

को जगा दिया। साँवलसिंह ने आव देखा न ताव बंदूक उठाली और शेरनी को जो आगे थी गोली मार दी। यह (गोली] उसके मुँह में घुस गई और वह वहीं बेदम होकर गिर पड़ी। उधर शेर के, जो कुछ पीछे था, पिछले पैर से एक मगर लिपट गया। मुझे मगर का थूथना, तेज चमकदार दाँत और उसका मोटे चमड़े से ढंका हुआ शरीर डोंगी से मजे में दिखा रहा था।

इस समय इन दोनों पानी और जमीन के जानवरों में अजीब कशमश शुरू हुई। शेर इतनी तेजी से गरजा कि आस्मान तक धमक जा पहुँची। फिर शेर मगर को दूर तक खींचता ले गया और इस तरह से उसने हाथ पांव चलाये कि मगर की एक आँख निकल गई: उसका सिर खूनसे तर हो गया। शेर का लुलुआ लोहे के पंजे से बढ़कर होता है। जहाँ वह हाथ मारता वहीं मगर के शरीर में गहरा घाव हो जाता था। बड़ी देर तक इन दोनों में लड़ाई होती रही। अंत में मगर मार खाते २ बेदम हो गया कि अचानक उसके मुँह में शेर की कमर आगई। बस अब क्या था, उसने इस जोर से उसे धर दबाया कि सारा जंगल शेर की गरज से काँपने लगा। थोड़ी देर तक इन दोनों में इसी प्रकार इतनी तेजी से लड़ाई होती रही कि कुछ समझ न पड़ता था। शेर दीवानों की तरह हाथ मारता और जहां कहीं उसका हाथ पड़ता वहाँ मगर का शरीर फट जाता था। आखिकार दम २ में शेर कमजोर होता गया। अंत में वह चिंघाड़ मारकर गिर पड़ा और मगर ने उसे कमर से दो टुकड़ा कर डाला। यह शेर और मगर की लड़ाई भी बड़ी ही विचित्र थी। मैं दावे

से कह सकता हूँ कि बहुत कम लोगों को ऐसी लड़ाई देखने का इत्तफाक हुआ होगा। इस समय मेरी जान बड़ी आफत में फँसी हुई थी। दलदल से ऐसी बदबू आ रही थी कि वह नर्कुंड जान पड़ता था। प्रत्येक समय जलचरों का डर था। रात को मच्छर और डाँस सोने न देते थे। दो रात मैं और मेरे साथियों ने बड़ी आफतों से काटीं। तीसरी रात को कहीं नींद में छतर और बहादुरलाल के कम्बल सरक गये। सवेरे को देखा गया कि उनके मुँह फूलकर कुप्पे बन गये हैं। छतरलाल की तो ऐसी दशा हो गई थी कि वह पहिचाना न जाता था।

साँवलसिंह ने कहा,–"बड़ी आफत में आ फसे।"

मैं—क्या कहना है।

बहा०—जैसा किया वैसा पाया।

मैं–इस दलदल से बचकर निकलने की आशा नहीं होती।

बहा०—मेरा भी यही ख्याल है।

मैं—मेरी जान में मौत सबको यहाँ खींचकर लाई।

छत०—मैं आपकी राय से सहमत नहीं हूँ।

मैं—ठीक है।

छत०—यदि सब को यहीं मरना होता तो उसी तूफान ही में मर जाते। यहाँ क्यों आते?

साँव०—यह दलील बहुत ठीक है।

छत०—जरूर उस दानवी रानी से भेंट होगी।

साँव०—हाँ सचमुच तुम इसी लिये आये भी हो।

छत०—और नहीं तो क्या? मित्र बनकर बदला लेंगे।

साँव०–तुम्हें तो हँसी सूझी है। पर मेरा दिल सूखा जाता है।

छतरलाल ने दिल्लगी से यद्यपि सब लोगों के दिल से शोक को भुला देना चाहा, पर उसकी हँसी का किसी पर कुछ असर न हुआ। मेरा दिल कह रहा था कि कोई आफत आना चाहती है। उधर जब छतर लाल ने देखा कि उसकी हँसी मजाक का कुछ असर न हुआ तो वह भी चुप हो रहा। सब लोग सुस्त होकर डोंगी में लेट गये। अभी हम लोगों को लेटे हुए मुश्किल से पंद्रह मिनट हुए होंगे कि मेरी गरदन पर कोई ठंडी ठंडी चीज आलगी, उससे मेरी आँखें खुल गईं। आँखें उठाकर देखा कि एक आदमी बरछी लिये खड़ा है और मेरी तरफ गौर से देख रहा है। यह देख मैं घबरा कर खड़ा हुआ। खड़े होकर देखा कि बहुत से आदमी हाथ में बरछियाँ लिये खड़े हैं। मेरे खड़े होते ही मेरे साथी भी खड़बड़ा कर खड़े हो गये। पर मैं ही सबके आगे था। इससे उस बरछी वाले ने बरछी के फल को मेरे कलेजे पर रख ऐसी भाषा में जिसमें ज्यादातर संस्कृत के शब्द थे, चिल्लाकर कहा,—

"अगर तू जरा भी बोलेगा तो मार डालूँगा।"

कहिये पाठक! जान किसको प्यारी नहीं होती? यद्यपि मैं मरने को तैयार था; लेकिन जब भाले बरछियों को देखा तो मैं क्या सब घबरा गये। पर मैंने बड़ी मिन्नत से कहा;— "मैं मुसाफिर हूँ; अचानक इधर आ निकला हूँ।"

उत्तर मैंने संस्कृत में दिया था। इससे वह समझ गया फिर उसने मुँह फेरकर एक बूढ़े से पूछा,—

"पिताजी! कत्ल कर दूँ।"

बुड्ढे ने पूछा,—इसका रंग क्या है?

बरछी वाले ने उत्तर दिया,—"सफेद।"

बुड्०—नहीं, मारो नहीं। रानी ने हुक्म भेजा है कि यदि सफेद रंग का हो तो न मारना।

बर०—इसमें एक काला भी है।

बुड्०—कौन?

बर०—(छतरलाल की तरफ इशारा करके) यह देखिये! इसकी निस्बत रानी ने क्या आज्ञा भेजी है?

बुड्०—कुछ आज्ञा तो नहीं मिली है। पर इसे मारो नहीं। इन सबको रानी के पास ले चलो।

यह सुनकर भालेवालों ने सबके हाथों को अपने हाथ में लेकर डोंगी से उतारा और फिर दलदल के बाहर जमीन पर ले गये। ये भाले वाले बड़े खूबसूरत और देखने योग्य थे। इनका रंग गोरा था। साँचा सुडौल था। दाँत बड़े खूबसूरत और चमकदार थे। पर इनकी सूरत खूबसूरती में बिलकुल उलटी थी। यानी ये सब ऐसे थे कि उनकी सूरत से जल्लादी और खूनीपन बरसता था। इन बरछी और भाले वालों का सरदार एक सफेदपोश लम्बे ढाँचे का बुड्ढा था, जिसको सब पिता कहकर पुकारते थे। वे सब ऐसी भाषा बोलते थे जिसमें सैकड़े पीछे अस्सी शब्द संस्कृत के थे। जब सब लोग जमीन पर पहुंच गये तो उन लोगों ने चारों आदमियों को दो पालकियों में सवार करा लिया और चल पड़े। इनके चेहरे ऐसे डरावने थे कि बात करने का साहस न होता था। उनमें सिर्फ एक वही बुड्ढा दयालु मालूम होता था: जिसे सब पिता! पिता!! कहकर पुकारते थे। इसलिये मैंने भी उसीको खुश करना और उसी से बातचीत करना उचित समझा। साथही यह भी आशा हुई कि उसीसे रानी का तमाम हाल मालूम होजायगा।

मैंने कहा,—"साँवलसिंह !"

साँव०—कहिये चाचाजी !

मैं—तुम्हारी राय में जो रानी सब की हाकिम है कौन है ?

साँव०—मेरी जान में यह वही रानी है जिसका बयान तान्त्रपत्र में "देवी या दानवी" करके लिखा गया है।

मैं—मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आता।

साँव०—नहीं आता है तो ठहरिये आ जायगा।

पाँचवीं लहर

प्रेम-प्रारम्भ।

बराबर कई घंटे तक कहार पालकियों को उठाये चले गये। आखिरकार उन्होंने उसे एक गुफा के मुँह पर रख दी और सब को उसमें से उतारा। गुफा से बहुत सी औरतें और कई मर्द देखने के लिये बाहर निकल आये। स्त्रियोंने तो सब को बड़े गौर से देखा। साँवलसिंह की सुन्दरता देखकर वे सबकी सब दंग रह गईं। इन पर्वतीय ललनाओं में एक लड़की जिसकी उम्र मेरे ख्याल में पन्द्रह साल की थी, खूबसूरती में सब से बढ़ी चढ़ी थी। उसका नाम शैलवती था। उसके काले काले भँवर के समान बाल उसके घुटने तक लटक रहे थे और आँखें तो बिलकुल मृग के समान थीं। उस लड़की ने पहिले चारों तरफ बड़े गौर से देखा। फिर दौड़कर वह साँवलसिंह के गले से लिपट गई और प्यार करने

लगी। यह हाल देखकर मैं तो बेंत की तरह काँप गया। मुझे तो अपने देश की बातें मालूम थीं। इससे मैंने समझा, कि जरूर यह मारा जावेगा। बहादुरलाल ने जब शैलवती का यह हाल देखा तो उसने शर्म से आँखें बंद कर लीं और कहा कि, ये पहाड़ी औरतें बड़ी निर्लज्ज हैं। पर न तो उस समय किसी ने शैलवती को धमकाया और न कोई साँवलसिंह से बोला। हाँ कुछ औरतें जो शैलवती की समवयस्का थीं झेंप सी गईं और बूढ़ी औरतें मुस्कुराने लगीं। पीछे मुझे मालूम हुआ कि इस पहाड़ी जाति का यही निराला रिवाज है। जिस समय कोई स्त्री किसी मनुष्य को पसंद करती है तो उस समय वह ऐसा ही करती है। इस प्रकार के लिपटने को उनमें बंधन कहते हैं। यदि आदमी भी उन्हीं की तरह प्यार करने लगे तो जाना जाता है कि उसको भी यह मंजूर है। फिर इसके बाद उन दोनों में विवाह हो जाता है। इस पहाड़ी जाति में मैंने एक और विचित्र बात यह पाई कि जिस प्रकार मेरे दक्खिन के भाइयों के पीछे उनके पिता का नाम जोड़ा जाता है उसी प्रकार उनमें बाप के नाम की जगह माँ का नाम मिलाया जाता है।

जब सब लोग गुफा में पहुँचे तो वह सफेदपोश बुड्ढा, जो भालेवालों का सरदार था और जिसका नाम बिल्लाली था सब के लिये खाना लाया। भूखे तो सब लोग थे ही, इससे वह बड़ा प्यारा मालूम हुआ और सब लोगों ने पेट भर कर खाया। जब चारों आदमी खाना खा चुके तो बिल्लाली मुझसे खूब बातें करने लगा। उसने कहा,— "रानी ने जो हम सब की मालिक है, हुक्म दिया है कि तुम मार न डाले

जाओ, नहीं तो तुम लोग रिवाज के अनुसार तुरंत मार डाले जाने के लायक थे। यहाँ अजनबियों के आने की मुमानियत है।..

मैं—पर रानी तो यहाँ से दूर रहती हैं; उनको मेरे आने की किस तरह खबर हो गई ?

बिल्ला० । (हँसकर) क्या तुम्हारे देश में ऐसा कोई आदमी नहीं है जो बिना कानों के सुन सकता हो और बिना आँखों के देख सकता हो ? पर अब इस किस्म की बातें न पूछो।

बिल्लाली की बात सुनकर मैं बड़ा विस्मित हुआ। सोचने लगा, पर समझ में कुछ भी न आया कि यह कौन है "देवी या दानवी ?" लाचार होकर यह कहते हुए कि "जैसी आप आज्ञा दें" मैं चुप हो रहा।

बिल्ला०—अब मैं आप लोगों को यहीं छोड़कर रानी के पास जाता हूँ। पाँच दिन के बाद फिर आप से आ मिलूँगा।

मैं—पाँच दिन में मुझे और मेरे साथियों के लिये क्या हुक्म होता है ?

बिल्ला०—आप बे खौफ यहाँ पाँच दिन तक ठहरें। पाँचवें दिन मैं लौटकर बताऊंगा कि आपको क्या करना चाहिये।

यह कहकर बिल्लाई रवाना हो गया। उसके जाने के बाद उस गुफा के निवासियों ने गुफा में चिराग जलाकर सारे गार में रौशनी कर दी। फिर उनमें से एक ने मुझे एक कोठरी दिखाकर कहा, कि इसी में आप लोग ठहरें। वह कोठरी भीतर से कब्र की तरह थी। मुझको वहाँ बड़ा डर लगता था।

पर चारों आदमियों ने भाग्य के ऊपर भरोसा कर वहीं बिस्तरा जमा लिया। दूसरे दिन बहादुरलाल से एक ऐसा काम हो गया कि सब लोगों की जान के लाले पड़ गये। बात यह हुई कि सब लोग खाना खाकर अभी बैठे ही थे कि इतने में एक अधेड़, पर खूबसूरत औरत वहाँ आई और बहादुरलाल की गले में बाँह डाल कर उसे प्यार करने लगी।

बहादुरलाल जो एक खूबसूरत जवान था, उसकी यह हाल देख घबरा गया। उसने दोनों हाथों से उस औरत को दूर ढकेल दिया। उसकी यह चाल देख मैं बड़े जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा। पर वह औरत भला कब उसका पीछा छोड़ने वाली थी। उसने समझा कि यह शर्मा रहा है, इससे उसने उसे पुनः प्यार करना आरम्भ किया। बहादुरलाल लज्जावान युवक था। वह उस स्त्री की ऐसी दशा देखकर पानी पानी हो गया। इससे फिर उसने उस अधेड़ को इतने जोर से ढकेल दिया कि वह चारों खाने चित्त जा गिरी।

मैं—अरे बहादुरलाल! यह अखाड़ा नहीं है। तू यह क्या कर रहा है?

बहा०—छिः छिः देखो न कैसी बेहया औरत है!

मैं—हुआ क्या?

बहा०—इस शैतान की नानी की तरफ तो देखिये। जबर्दस्ती गले की हार हुई जाती है। भाई! इसको रोको। देखो, देखो यह फिर मेरी तरफ चली आ रही है। अरे, मैं तेरे लायक नहीं हूँ। अरे दादा अचरजसिंह, इसे मना करो। तुम तो हँस रहे हो। छिः! छिः!! छिः!!!

मैं—अरे यार, यह औरत है। औरतों के साथ यों पेश नहीं आना चाहिये।

बहा०—ऐसी तैसी में गई औरत ! हैं, यह तो फिर मेरी तरफ आ रही है ! जान पड़ता है कि यह जरूर मुझे खाजायगी। ईश्वर ! मुझे बचाओ ! ! जहाँ उसने एक पाँव मेरे ऊपर रक्खा तहाँ बस मैं चला।

बहादुरलाल ने पहिले दो तीन बार उस औरत को हटाया। पर जब उसने देखा कि वह पीछा नहीं छोड़ती है तो वह बड़ी तेजी के साथ वहाँ से भागा। थोड़ी दूर तक तो वह भी उसके पीछे पीछे दौड़ती गई। पर फिर हैरान होकर लौट आई। उसकी इस असफलता पर तमाम उपस्थित पहाड़ी जाति हँसने लगी। औरतें उसको ताने देने लगीं। उस समय उस औरत का यह हाल था कि वह आग भभूका हो रही थी। यदि उसका वश चलता तो वह उसी वक्त उसकी बोटी बोटी काट डालती। पर, इतने पर भी वह इसी तरह गरदन हिलाती हुई कि " अच्छा समझ लूँगी" कहकर चली गई।

मैंने कहा,—"बहादुरलाल ! तुम ने बड़ा बुरा किया।"

बहा०—वाह साहब ! आप भी गजब करते हैं।

मैं—मुझे इसका नतीजा अच्छा नहीं दीख पड़ता।

बहा०—वह कर क्या सकती है ?

मैं—तुम भूलते हो।

बहा०—चाहे जो कुछ हो। पर मैं तो उसके प्यार को फूटी आँख से भी नहीं देख सकता।

यह सुनकर मैं चुपचाप हो रहा। पर मुझे विश्वास था कि वह खिसियानी हुई औरत जरूर बदला लेगी। पर मुझे इसका जरा भी गुमान न था कि वह ऐसा बदला लेगी, जिससे छबको छट्ठी का दूध याद हो जायगा। जब बहादुरलाल इस

औरत से उलझ रहा था तो उधर साँवलसिंह शैलवती के साथ बैठा हुआ बातें कर रहा था। शैलवती अपने भावीपति के साथ परछाँई की तरह रहती थी। साँवलसिंह को उसका भावीपति मैंने इस लिये कहा है कि उसने उसे ढकेला नहीं और न कुछ कहा था। और इसी शैलवती के द्वारा सब लोगों को रानी की बहुत सी बातें मालूम भी हो गई थीं।

चार दिन तो बेखटके बीत गये। चौथी रात को जब चारों आदमी आग के पास बैठे हुए थे और शैलवती किसी बेसी भाषा में जिसे मैं बिलकुल न समझ सकता था बैठी हुई गुनगुना रही थी, एकाएक अँधेरे की तरफ जो गुफा में फैली हुई थी, देखने लगी और घबरा गई। फिर वह उठ खड़ी हुई और साँवलसिंह के सिर पर हाथ रख कर इशारे से बोली कि इस अँधेरे की तरफ देखो। सब लोगों ने उसकी तरफ़ देखा। पर किसी को कुछ न दिखलाई पड़ा। यद्यपि मुझे और मेरे साथियों को कुछ न दिखलाई पड़ा था, पर उसकी आँखों ने जरूर कोई चीज उस तारीकी में देख ली। अतः वह इस तरह काँपने लगी जैसे कि कोई जड़ैया का रोगी काँपता है। आखिर में काँपते काँपते वह चकराकर वहीं मेरे बीच में गिर पड़ी।

थोड़ी देर बाद उसे होश हुआ। पर जब मैंने उसके इस तरह काँपने का कारण पूछा तो उसने कुछ न बताया। वरन इधर उधर की बातों में सब को टाल दिया। मैंने फिर उससे पूछा,—शैलवती! मेरी बातों का उत्तर क्यों नहीं देती हो?"

शैल०—मैं आपका सवाल नहीं समझी।

मैं—तुम ने क्या देखा था?

शैल०—मैंने कुछ नहीं देखा।

मैं—कुछ नहीं ?"

शैल०—हाँ, ऐसी चीज के बताने से क्या फायदा कि जिसके सुनतेही तुम डर जाओ। अब मुझसे कुछ न पूछो कि मैंने क्या देखा।

इस के बाद वह बड़े प्यार से लाँबलसिंह को चूमने लगी और बोली,-"मेरे प्यारे पति ! रात को जब मैं तुम्हारे पास से चली जाऊँ और जब तुम मुझे अपने पास न देखो तो तुमको चाहिये कि मुझे याद किया करो, क्योंकि मैं दिलोजान से तुम पर मरती हूँ। यद्यपि मैं जानती हूँ, कि मुझसे तुम्हारी लौंड़ियाँ भी अच्छी हैं और मैं इस लायक नहीं हूँ कि तुम्हारे पाँव धो धोकर पीऊँ। तथापि आओ प्यारे, इस समय को गनीमत समझ कर एक दूसरे को प्यार कर लें।"

फिर दोनों घुल घुलकर बातें करने लगे।

छठवीं लहर

रात केबाद

सरे दिन गुफा की आमदखोर जातियों ने मुझे और मेरे साथियों को खबर दी कि आज आप लोगों के आने की खुशी में एक जल्सा होगा और बड़ी धूमधाम से जाफत की जावेगी। जिस समय शैलवती ने यह समाचार सुना, उसका रंग उड़ गया। उसने अपने जातिवालों से कहा-क्यों नादानी करते हो? पर किसी ने उसकी बातें न सुनी। लाचार होकर वह भी चुप हो रही।

दावत के दिन उस जंगली जाति ने खिलाफ मामूल गुफा में बहुत सी लकड़ियां इकट्ठी करके आग लगा दी और चालीस आदमी जिस में सिर्फ दोही औरतें थीं उसे घेरकर बैठ गये। इन दो औरतों में से एक शैलवती भी थी जो साँवलसिंह के पास बैठ गई और दूसरी अधेड़ व देवनी सूरत वाली थी जिसको बहादुरलाल ने पसन्द नहीं किया था। वह आज फिर बहादुरलाल के पास आ बैठी और उसको बातों में लगाने लगी। पर वह उसकी तरफ ताकता तक नहीं था और यदि वह दस सवाल करती तो वह एक का भी उत्तर न देता था।

मेरी तबीयत इस समय स्वयं घबड़ाई हुई थी। मेरे पास इस वक्त दो नाली बंदूक थी और बहादुरलाल के पास भी एक वैसीही दो नाली थी और साँवलसिंह के पास केवल छोटा सा एक खंजर और बेचारा बहादुरलाल बिलकुल

खाली हाथ था। सब जंगली हथियारबंद थे और सब के पास एक एक भाला था जो पीछे की तरफ बँधा हुआ था। इस आग के पास एक भारी कल्छुला और एक लोहे की डोंगी जिसमें एक लम्बा दस्ता लगा हुआ था पड़ी हुई थी। इसी समय ऐसा जान पड़ने लगा जैसे कोई मेरे कानों में कह रहा है कि इस लोहे की किश्तीनुमा तावे और कल्छुले का यहाँ रहना ठीक नहीं। इस वक्त तमाम जंगली बैठे हुए शराब पी रहे थे। यद्यपि उन सभों ने मुझसे और मेरे साथियों से भी शराब पीने के लिए कहा, लेकिन मैंने इनकार कर दिया था। अभी मैं इस विचित्र दावत के विषय में सोचही समझ रहा था कि मेरे सामने एक जंगली बोल उठाः—

"वह हमारे नेवाले का माँस कहाँ है ?"

इसके जवाब में सारे जंगलियों ने हाथ उठाकर आग की तरफ इशारा किया और सब चिल्ला कर बोले,—"माँस अभी मँगाया जाता है।"

एक ने कहा,—"क्या माँस बकरे का है ?"

यह सुनकर सभोंने अपना अपना हाथ भालों पर रख कर एक स्वर से कहा,—"हाँ यह बकरा है, पर उस को सींग नहीं है, बकरे से ज्यादा स्वादिष्ट है हम लोग इसी को हलाल करेंगे।"

यह कह कर उन सभों ने भालों से हाथ हटा लिया।

एक ने कहा,—"वह क्या बैल है ?"

फिर सब अपने हाथों को भालों पर रख एक स्वर से बोले,—"हाँ बैल है। मगर उसके सींग नहीं है और बैल से अच्छा है। आज हम लोग उसी को हलाल करेंगे।"

यह उत्तर देकर उन्होंने फिर अपने २ हाथ भालों से खींच लिये।

उन सभों को यों बातें करते सुनकर उधर बहादुरलाल तो बिचारा काँप रहा था, इधर वह दानवी औरत उसके शरीर पर इस तरह हाथ फेर रही थी जैसे कोई कस्साई हलाल होने वाले बकरे के अङ्ग प्रत्यङ्ग को टटोलता है।

एक ने कहा,—"क्या माँस पकने के लिये तैयार है?"

सभों ने उत्तर दिया,—"हाँ तैयार है! हाँ तैयार है!!!

साँवलसिंह ने इस वक्त मुझसे कहा,—"चाचाजी! ईश्वर बचाये। लक्षण तो बुरे दिखलाई पड़ रहे हैं। यह सबतो वही लोग हैं, जो आदमी के माँस को खाते हैं जैसा कि ताम्र-पत्र में लिखा हुआ है।"

मैं—प्यारे! चुपचाप बैठे रहो और देखो कि क्या होता है।

छत०—यह समय बोलने का नहीं है।

छतरलाल ने अभी बात पूरी भी नहीं की थी कि इतने में उनमें से दो जंगली उठे और एक ने वह लोहे की डोंगी और दूसरे ने उस कल्छुले को उठाकर गरम होने के लिये आग पर डाल दिया। इसी समय उस देवनी ने भी बड़ी चालाकी से एक फंदा निकाल कर बहादुरलाल के गले में डाल दिया।

बहादुरलाल उस फंदे में पड़ने से इस तरह हाथ पैर मारने लगा जैसे जाल में मछली। यह देख कर मैं तो हक्का बक्का रह गया। पर छतरलाल ने ललकार कर कहा,—"देखते क्या हो? बहादुरलाल की मदद करो, नहीं तो वह कबाब हुआ चाहता है।"

यह सुनकर मैंने अपनी बंदूक सम्हाली, फैर करके उस औरत का, जो उस गोलमाल की मुखिया थी काम तमाम कर

दिया। पर शोक! महाशोक! कि वह गोली उस देवनी की छाती को तोड़ती हुई दूसरी तरफ को निकल गई और बहादुरलाल को, जो उसके पीछे था, जा लगी। वह विचारा भी उसके लगने के साथ ही वहीं ठंडा हो गया।

इस अवसर पर छतरलाल ने बड़ा काम किया। क्योंकि मेरी बंदूक खाली हो चुकी थी और वह लोग मुझे मार डालने को तैयार थे कि वह झट मेरे आगे आकर खड़ा हो गया और अपनी बंदूक से उसने चार पाँच को यमलोक पहुँचाया। इतनी देर में मैंने फिर बंदूक भरली और दो का काम तमाम किया। उधर साँवलसिंह ने भी अपने खंजर से तीन को ठिकाने लगाया। पर भला हम तीन आदमी इतने जंगलियों को कैसे पा सकते हैं! जब मैंने देखा कि वे हमें जीते ही जी आग में डाल देना चाहते हैं तो तीनों आदमी वहाँ से भाग कर दूर एक कोने में जाकर खड़े हो गये। मैंने सोचा था कि जब तक वे पास आवेंगे बंदूकें भर ली जावेंगी। पर भला कब वे ऐसी मुहलत देने लगे? वे तुरन्त भाले फेंक कर पीछे दौड़ पड़े और मैं अपने साथियों सहित घिर गया।

पर शोक! इस समय मेरे पास कोई तलवार न थी। केवल बंदूक थी, सो भी खाली। यही हाल छतरलाल का भी था। उसकी बंदूक भी खाली थी। हाँ साँवलसिंह के पास जो छोटा सा खंजर था उसी से उसने थोड़ी देर तक किसी को फटकने न दिया। तीन आदमी मुझसे लपट गये, तीन छतरलाल से और इतने ही साँवलसिंह से भी। उन तीनों ने छतरलाल को जमीन पर गिरा दिया। मैं पहिले ही कह चुका हूँ कि मैं एक पहलवान की ताकत रखता था, इससे दोनों हाथों से मैंने दो

को इस तरह दबाया कि उनकी हड्डियां चर-मरा गईं और वे वहीं अधमुर्दे होकर गिर पड़े। तीसरे को मैंने एक मुक्का इस जोर से मारा कि उसके पसुली की हड्डी टूट गई। वह औंधा मुँह हो कर गिर पड़ा। इस लड़ाई झगड़े में मेरा पैर भी ऐसा फिसला कि मैं भी चारों खाने चित्त गिर पड़ा। बस क्या था वे दोनों जिनकी हड्डियां टूट गई थीं मेरे ऊपर आ पड़े।

ये दोनों जो कि मेरे ऊपर गिरे थे मर गये थे। पर उनके साथियों ने समझा कि वे दोनों जीते हैं और मुझे मार गिराया है उनकी इस गलती से मैं बचा रहा, नहीं तो और भी दो चार मुझे दबोच लेते। अब साँवलसिंह का हाल सुनिये। तीन आदमी उससे लिपट गये। उनमें से एक ने तो उसके हाथ को मुड़ेर कर उसके खंजर को छीन लिया और दो ने उसे उठाकर जमीन पर दे मारा। इसी समय शैलवती भी दौड़ी हुई आकर साँवल सिंह से लिपट गई। यद्यपि उसके स्वजातियों ने उसे ऊपर से खींच देने की बारहा चेष्टा की, परन्तु वह न हटी। जिस तरफ वे मारने के लिये भाला उठाते उसी तरफ वह अपने को आगे कर देती।

एक ने डपट कर कहा,—"शैलवती! हट जा।"

शैल०—मैं तो नहीं हटूँगी।

दूसरे ने बिगड़ कर कहा, —"क्या करती है?"

शैल०—अपने पति को बचा रही हूँ।

तीसरे ने कहा —"तेरे आदमी ने मेरे कई आदमियों को मार डाला है।"

शैल०— मैं अपने जीते जी इसका बाल भी बाँका न होने दूँगी।

पहिले ने बिगड़ कर कहा,—"मारो इस औरत को भी।"

शैल०—हाँ पहिले मुझे मार डालो, फिर उसकी तरफ देखो।

चौथे ने कहा,—"अच्छा एक बरतन लाओ। उसी में इन दोनों का खून जमा किया जावेगा। (बिगड़ कर) मार डालो इन दोनों को।"

शैल०—हाँ हाँ वार करो।

एक बार उन सभों ने फिर चाहा कि शैलवती को साँवल सिंहके ऊपर से हटा दें। पर वह ऐसी चिपटी हुईथी जैसे सरेस और कागज। जब उन आदम खोरों ने देखा कि वह उसे नहीं छोड़ती है तो वे आग भभूका हो गये और सभोंने साँवलसिंह के साथ शैलवता को भी मार डालना निश्चय किया। अतएव, दोनों को मार डालने के लिये एक जंगली ने दोनों हाथों से हवा में एक भाले को ताना। यद्यपि मैं अब तक होश में था, तथापि मेरे शरीर में इस अचानक चोट के लगने से जरा भी ताब बाकी न रहीं थी। तथापि मैंने उन दोनों मनुष्यभक्षियों को जो ऊपर गिरे हुए थे जोर से लुढ़का दिया। किन्तु उस भाले के भारी फल की चमक से मेरी आंखों में चकाचौंधी छागई। साथ ही मेरी आँखें भी बंद हो गईं और मैंने समझ लिया कि बस अब मेरे साँवलसिंह का अंतीम समय आ गया है। इतनेही में मेरे कानों में यह आवाज सुनाई पड़ी कि —"खबरदार! जो हाथ हिलाया।" फिरमैं बेहोश होगयो। साथही मेरे दिल में यह ख्याल पैदा हुआ कि मेरी वह बेहोशी भी आखिरी बेहोशी है।

सातवीं लहर

रानी।

ब मेरी आँखें खुलीं तो मैंने देखा कि उस दानवी औरत और बहादुरलाल की लाश के पास चौदह आदमखोर भी मरे पड़े हैं और बाकी सब बिल्लाली के आदमियों की हिरासत में हैं। इस समय बिल्लाली जामें से बाहर हो रहा था और उनको बहुत भला बुरा सुना रहा था। इस समय बिल्लाली को मैंने यह कहते सुना कि "नमकहरामों! तुम्हें ऐसी सजा दी जावेगी कि, तुम सब भी याद करोगे। तुम सभों के मरते समय नद को भी तुम्हारी रुलाई पर करुणा होगी।" जब मुझ में खूब ताकत आगई तो उस सरदार बुड्ढे ने मुझ से कहा कि "रानीने जो सबकी मालिक है सबको बुलाया है और शैलबती भी तुम्हारे साथ जावेगी।" शैलबती का साथ जाना तीनों आदमियों के लिये लाभदायक हुआ, क्योंकि दूसरे ही दिन साँवलसिंह को तेज बुखार आ गया। उस समय शैलबती ही उसकी सेवा टहल करने लगी। सच बात तो यह है कि अगर वह न होती तो उसकी जान को बचाना बड़ा ही कठिन था।

इसके दूसरे दिन एक और घटना हुई। जिसमें मेरी और बिल्लाली की खूब गहरी दोस्ती हो गई। अचानक बिल्लाली की पालकी ढोने वाले कहार को साँप ने काट लिया और वह पालकी सहित दलदल में गिर पड़ा। इस समय यदि मैं दौड़कर

बिह्लाली को दलदल से न निकाल लेता तो उसका बचना असम्भव हो गया था। जिससमय मैंने बिह्लाली को दलदल से निकाला, उसने मुझे बहुत बहुत धन्यवाद दिया और कहा,—"भाई! तुमने आज मेरी जान बचाई है, एक दिन ऐसा भी आवेगा कि मैं तुम्हारे काम आऊँगा। मैं ऐसा आदमी नहीं हूँ कि तेरा इहसान भूल जाऊँ। बल्कि किसी समय तेरी भी जान बचाऊँ।" मतलब यह कि सब लोग कई दिन तक रास्ता तय करते हुए एक ऐसी जगह पर पहुँचे जो पानी से पाँच सौ फीट ऊँची थी। इस समय बिह्लाली ने मुझसे कहा कि उस तरफ आँख उठाकर देखो। उसके कहने पर जो मैंने उस तरफ दृष्टि उठाकर देखा तो उसके कथनानुसार मुझे पानी से बारह सौ फीट की ऊँचाई पर एक महल दिखलाई पड़ा, जो पहाड़ काट कर बनाया गया था।

मुझे विस्मित देखकर बिह्लाली ने कहा'—"क्यों साहब! क्या तुमने किसी रानी का ऐसा मकान नहीं देखा है? हमारी इसी रानी को जो यहाँ के तमाम लोगों की मालिक है इससे भी ज्यादा सामर्थ्य है।,,

इस पहाड़ में एक दरवाजा बनाया हुआ था। जब तीनों आदमी उसके भीतर जाने लगे तो उसने अपने आदमियों को कुछ आज्ञा दी। उसके आदमियों ने मेरे और मेरे साथियों की आँखों पर पट्टी बाँध दी। इसके बाद ही रानी के आदमी आ गये और वे सब को उस मकान के भीतर लिवा ले गये जो हम लोगों के आने की खुशी में सजाया हुआ था। शैलवती भी साथ थी। साँवलसिंह सोया हुआ था। पर वास्तव में यह नींद नहीं बल्कि बेहोशी थी। जब वह आँख

खोलता तो वकने झकने लगता और बड़ी मुश्किलों से मैं उसे सुलाता।

मैं बिल्लाली के साथ साँवलसिंह के पास बैठा हुआ था और शैलवती उसका सिर दांव रही थी कि एक आदमी रानी के पास से आया और बोला कि, चलो तुम्हें रानी बुलाती हैं। इस समय साँवलसिंह की तबीयत बहुत ही खराब थी। यद्यपि मेरा दिल जाने को न चाहता था कि इसे छोड़ कर जाऊं, पर मैं रानी की आज्ञा को टाल न सका और बिल्लाली के साथ उसकी सेवा में हाजिर हुआ। जिस समय मैं साँवलसिंह के पास से उठा उस समय मैंने उसकी अंगूठी, जो हाथी दांत की संदूकची से निकली थी, उठा लिया और अपनी अंगुली में पहन लिया। जब मैं रानी की सेवा में उपस्थित हुआ तो सिर नवाकर मैंने उसे प्रणाम किया और बिल्लाली तो घुटने के बल होकर जमीन पर लम्बा चौड़ा हो गया। मैंने देखा कि एक चमचमाते कमरे में एक जम्बूरी परदा लटक रहा है। जिस समय मैं परदे के सामने खड़ा हुआ वह हिला और उसमें से रानी नकाब से अपना मुँह ढांपे हुए निकल आई। यद्यपि सारा शरीर कपड़े से ढंका हुआ था, तथापि उसके भीतर से उसकी देह चमक रही थी। मुझे देखकर वह मुस्कुराई और ऐसी मीठी आवाज में जैसे कोई बुलबुलबोस्ताँ चेहक रही हो या चांदी की घंटी बज रही हो बोली,—"अचरजसिंह! तू डरता क्यों है?"

मैं—ऐ रानी! यह तेरी सुंदरता का असर है।

रानी—झूठे लपाड़ी! तू खुशामद करता है। पर मैं औरत हूँ, इसलिये तेरा कसूर माफ करती हूँ और तुझे इस झूठ

बोलने के अपराध की सजा नहीं देती हूँ।"

मैं—रानी ! यह सब तुम्हारी दयालुता का कारण है।

रानी—ऐ बिल्लाली ! तेरे नौकरों ने मेरे मेहमानों से बहुत बुरा बर्ताव किया है। तुझको शर्म आनी चाहिये। मैं तुझे हुक्म देती हूँ कि जो कैदी तू अपने साथ लाया है उन्हें जीते जी जमीन में गाड़ दे। जा दूर हो ! जा मेरी आँखों से दूर हो ! ! !

यह सुनकर बिल्लाली भींगी बिल्ली की तरह दबक कर वहाँ से चला गया। उसके जाने के बाद रानी ने मुझसे पूछा,—"तुम्हारे यहाँ का क्या हाल है ?"

मैं—सब अच्छा है।

रानी—क्या हजरत मसीह यहूदियों के दरमियान पैदा हो चुके हैं ?

मैं—रानी ! मैंने सुना है कि वे यहूदियों को भड़काते थे, इससे यहूदियों ने उन्हें सूली पर चढाकर मार डाला, वे अब आस्मान पर हवा खा रहे हैं।

रानी—वास्तव में वह बड़ा दगाबाज था। उसने मुझे भी अपने सर्वमान्य अचल सनातनधर्म से हटाने की चेष्टा की थी। इसीसे मैं उस देश को छोड़ यहाँ चली आई हूँ; यह दो हजार बरस की बात है।

मैं—रानी ! आप मुझे बेवकूफ क्यों बनाती हैं ? आपकी उम्र तो मुश्किल से पचीस साल की होगी, लेकिन आप मुझे दो हजार बरस की बात कैसे सुनाती हैं ?

रानी—अचरजसिंह ! इस अथाह संसार में बहुत सी बातें ऐसी हैं जिनसे तू जानकार नहीं है। यह याद रख कि मौत कोई चीज नहीं है। क्या तुझे अपने आचार्यों की बातें

याद नहीं हैं ? क्या तू ने राम रावण का हाल नहीं पढ़ा है ? इस संसार में कोई मरता नहीं है । हाँ इसको नश्वर होने के कारण हर एक चीज अपना जामा बदल लेती है । इसमें जरा भी आश्चर्य करने की बात नहीं है कि मैं दो हजार बरस से जीती हूँ । जिन्दगी निस्सन्देह विस्मयजनक है, पर उसका बढ़ जाना (यानी बहुत दिनों तक जीना) बिलकुल आश्चर्यजनक नहीं है । फिर रानी ने अपनी हथेली मेरे आगे बढ़ा कर कहा कि इसमें देख ! ज्योंही मैंने उसकी तरफ दृष्टिपात किया त्योंहीं वह हथेली शीशे की तरह चमकने लगी और उसमें वही भयानक तूफान और अपनी डोंगी दिखलाई पड़ी । मैंने डर कर आँखे बन्द कर लीं; उसने भी हथेली खींच ली । फिर उसने साँवलसिंह का हाल पूछा और अपनी हथेली दिखलाई । मैंने उस अनूठे आईने में देखा कि साँवलसिंह बिस्तरे पर पड़ा हुआ है ; शैलवती उसका पाँव दबा रही है । उसने पूछा,-"क्या यह वही शैलवती है जिसकी तरफ से मुझे सावधान किया जाता है ? "

मैं-हाँ रानी ! यह वही शैलवती है जो दिन रात साँवलसिंह की सेवा किया करती है ।

रानी-मैंने अपनी दासियों को जो कानों से बहरी और मुँह से गूँगी हैं तेरी सेवा के लिये भेज दिया है । अब जा और आराम कर । यदि कोई बात कहना चाहता है तो बे खटके कह डाल ।

मैं-अगर मैं जान की माफी पाऊँ तो कुछ निवेदन करूँ ।

रानी-हाँ । मैंने माफ किया । कह क्या कहना चाहता है ।

मैं—ऐ देवि ! अपने मुँह से जरा नकाब हटा कर मुझे अपनी खूबसूरती की एक छटा दिखला दो ।

रानी—मैं और ही किसी आदमी के लिये हूँ। तुझसे मेरा चेहरा देखा नहीं जायगा।

मैं—निस्सन्देह! आप बहुत ठीक कहती हैं। पर सूर्यभगवान फूल और उसके काँटों को बराबर लाभ पहुंचाते हैं। आपको छटा का निदर्शन कराने में कुछ हर्ज तो नहीं है।

यह सुनकर रानी मुस्कुरा पड़ी और बोली,—"तू बड़ा गुस्ताख है।"

इसके बाद रानी ने अपने चेहरे से नकाब उठा लिया। मैंने देखा कि सौंदर्यमयी रानी जो बाहर से ज्यादा उम्र जान पड़ती है, बीस साल से ज्यादा उम्रकी नहीं है। पर जब मैंने उसके चेहरे की तरफ नजर उठाई तो एक बिजली सी मेरी आँखों के सामने कूदने लगी और घबरा कर मैंने आँखों को अपने हाथों से ढक लिया। सचमुच में मैंने आज तक ऐसी सुरसुन्दरी कभी नहीं देखी थी। उसकी खूबखूरती क्या थी मानों सूर्यभगवान की किरणें थीं।

मैं—हे ईश्वर!

रानी—मैंने तुझसे कहा था न कि तू मेरा चेहरा देख नहीं सकेगा! अचरजसिंह! सुन्दरता एक बिजली है। ज्यादातर वह चमककर भारी पेड़ों को बरबाद करती है।

मैं—निस्सन्देह! आप बहुत ठीक कह रही हैं।

एकाएक रानी ने मेरी अँगुली में साँवलसिंह की अंगूठी देख ली। इस अँगूठी को देखतेही उसका रंग बदल गया। उसकी आँखों से आग की चिनगारियां निकलने लगीं। मैं इस दृश्य को देखने की ताब न लाकर मुँह के बल वहीं गिर पड़ा।

उसने पूछा,—"सच बता, तूने यह अँगूठी कहाँ से पाई? इस अँगूठी के नगीने पर सूर्यभगवान की तसवीर बनी हुई है। इसी किस्म की एक अँगूठी मेरे प्यारे देवसिंह के हाथ में उस समय भी थी जब कि वह यहाँ आया हुआ था। हाय! उस समय मैंने भारी भूल करके उसे मारडाला था और उसकी स्त्री वराङ्गना ने इसको उठा ली थी। अगर तू सच सच न बतायेगा तो मैं गरम नजर से तुझे देखूँगी और तू यहीं जलकर राख हो जायगा।

मैं–रानी! (गिड़गिड़ा कर) यह अँगूठी मैंने जमीन पर गिरी पाई है।

रानी–तेरी बातों से सच्चाई की बू निकल रही है। अच्छा! उठ और अपने कमरे में चला जा।

मैं धीरेसे चुप चाप उठ खड़ा हुआ और अपने कमरेकी तरफ चल पड़ा। मुझे इस समय ऐसा मालूम होता था जैसे मैं खुमार में हूँ; मैं पैर कहीं डालता और वे पड़ते कहीं थे,मेरे पैर बिलकुल मेरे अधिकार के बाहर थे। जब मेरे हवास ठीक हुए तो मैं सब के पहिले साँवलसिंह की चारपाई के पास गया इस समय उसकी हालत बहुत खराब हो रही थी। उसकी छाती ठंडी थी। बाकी सारा शरीर आग की तरह जल रहा था। चेहरे पर मुर्दनी छाई हुई थी। शैलवती उसी प्रकार सेवा-शुश्रूषा में लगी हुई थी। उस प्रेम की पुतली को खाना, पीना, उठना, बैठना और सोना सब कुछ भूल सा गया था, ऐ प्रेम! सचमुच तुझमें बड़ी ताकत है। तेरेही सहारे यह सारी दुनियां हरी भरी दिखाई पड़ रही है यदि आजदिन तू न होता तो निस्सन्देह यह नश्वर संसार निर्जन और मनुष्य हीन हो गया होता।

मैं अपने प्यारे साँवलसिंह का यह हाल देख कर घबरा गया। उसी घबराहट में मैं ठंडी हवा की तलाश में उस गुफा के बाहर निकल आया। इस गुफा के बाहर एक बड़ा मैदान दिखलाई पड़ा। उसके बीच में नीचे उतरने के लिये सीढ़ियाँ दिखलाई पड़ीं। मैं बराबर उसी सीढ़ी से नीचे उतरता चला गया। नीचे जा कर मुझे दूर एक जलती हुई आग दिखलाई पड़ी; मैं धीरे धीरे उसी तरफ बढ़ता गया। और एक महीन परदे को उठा कर उस जगह पहुँच गया जहाँ कि आग जल रही थी। वहां पहुँच कर मैं बड़ा विस्मित हुआ; देखा कि उस आग में जरा भी धुवां नहीं है। आग के पास एक लाश पड़ी हुई थी और उसके पास ही एक औरत भी बैठी हुई थी यह बैठने वाली औरत और कोई नहीं रानी ही थी।

इस समय रानी के चेहरे से विचित्र प्रकार की डाह-ईर्ष्या बरस रही थी। वह उस समय ऐसी आत्मा जान पड़ती थी जो किसी बातों से रूठ कर नर्ककुण्ड की तरफ भागी चली जाती हो। मैं ने सुना 'रानी' किसी को कोस रही है। जिस समय वह सरापती थी उस समय उसके मुँह से आग की लपटें निकलती थीं। इसके बाद मैंने बड़े गौर से जब कान लगा कर सुना तो उसे यह कहते हुए पाया--"धिक्कार है नैपोलिन तुझे धिक्कार है! तेरी आत्मा को कहीं भी चैन न मिले!! तेरी वजह से मेरा प्यारा मुझसे न मिल सका!!!"

'प्यारा' का शब्द मुँह से निकलने के साथ ही वह खूब रोई; थोड़ी देर तक रोने के बाद उठी और उसी लाश के पास जो आग के समीप पडी हुई थी गई, फिर यों कहने लगी,--"ऐ मेरे प्यारे देव! मैंने तुझे क्यों मारा! हाय! मैंने बड़ा गजब

किया !!हाय ! मैंने बड़ा बुरा किया ! ऐ मेरे प्यारे ! मैं तुझे जिन्दा कर सकती हूँ। आ उठ ! मेरे साथ बातें कर ! ! ! "

उसके ऐसा कहने पर वह लाश हिली। साथ ही मेरा कलेजा भी बित्तों उछलने लगा। फिर उसने यों कहना आरम्भ किया,—" प्यारे देव ! तेरे इस प्रकार हिलने से फायदा नहीं है। क्योंकि मैं जानती हूँ कि यह आत्मा जो इस समय तुझ में डाली गई है और जिससे तू हिला है, तेरी नहीं, मेरी है। मेरी आत्मा से तेरा जीना बिलकुल निरर्थक है।"

यह कह कर रानी उस लाश के पास बैठ गई, और उस चादर को जिससे वह ढंपी हुई थी पागलों की तरह चूमने लगी। अब मुझ में देखने की ताव बाकी न रही। मैं उस दृश्य को देखने के निमित्त और न ठहर सका; यह सोचता हुआ कि यह है " देवी या दानवी " झट उस कमरे से बाहर निकल आया।पर मेरी समझ में जरा भी न आया कि यह " देवी है या दानवी ? "

आठवीं लहर

मर के जी उठना।

सरे दिन साँवलसिंह की हालत और भी खराब हो गई। बिल्लाली ने मुझसे कहा कि मुश्किल से यह रात बिता सकेगा। यह सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैं झट इस आशा से रानी के पास दौड़ा हुआ गया कि वह जरूर उसे अच्छा कर देगी। जब मैं उस की सेवा में पहुँचा तो वह दीवाने आम से लौटी

आ रही थी। मुझे देखते ही वह ठहर गई और बोली कि, आ तुझे अजायबखाना दिखलाऊँ। इसके बाद वह मुझे एक बुर्जी में ले गई। इस गुम्बद में जो एक भारी गुफा के भीतर था, हजारों बल्कि लाखों लाशें पड़ी हुई थीं। पर उसमें कोई भी ऐसी चीज दिखलाई न पड़ी जिससे उनके इतने दिनों तक बिना सड़े गले पड़े रहने का पता लग सके। रानी ने मुझे दिखाकर कहा कि, सैकड़ों साल बीत गये कि यहाँ एक बड़ा शहर बसा हुआ था। पर एक बार यहाँ एक ऐसी बीमारी आई जिससे सबके सब मर गये। अतः उनको जलानेवाला कोई भी न रहा। इससे उनकी लाशें इसी बुर्ज में रखवा दी गईं।

यह सुनकर मैं और भी डर गया। मेरे सारे शरीर के रोंगटे खड़े हो गये। मैंने कहा,-"मुझे यहाँ से शीघ्र ले चलो"

रानी-क्यों ?

मैं-मुझमें इस भयानक दृश्य के देखने की ताब नहीं है।

रानी-अच्छा मेरे कमरे में आओ।

अपने कमरे में आकर रानी ने अपने मुँहसे नकाब हटा लिया। उसकी सूरत देखते ही मैं चित्रवत हो गया। रानी मुझे आश्चर्यित देखकर हँस पड़ी। वास्तव में रानी दो हजार बरस से जीती थी और बड़ी ही योग्य भी थी। पर फिर भी औरत थी। संसार में ऐसी कोई भी औरतें नहीं जो अपने लावण्यता की प्रशंसा सुनकर प्रसन्न न हों। इसके बाद मैंने कहा,--

"मेरा लड़का ! मेरा प्यारा ! बहुत बीमार है, उसकी कुछ दवा करो।"

रानी-अच्छा। तू चल, मैं आई।

मैं रानी के पास से साँवलसिंह के यहाँ आया। वह इस समय बिलकुल बेहोश था। उसको दीन दुनियां की बिलकुल सुधबुध न थी। अभी मैं साँवलसिंह की चारपाई के पास बैठा ही था कि छतरलाल दीवानों की तरह दौड़ा हुआ आया और कहने लगा कि "एक लाश दौड़ी चली आ रही है।" यह सुनते ही मैं चकित होकर देखने लगा तो रानी को आती पाया। जब रानी भीतर आई तो उसने शैलवती, जो चारपाई के पास खड़ी थी और छतरलाल जो एक कोने में खड़ा हो गया था, दोनों को बाहर निकल जाने को कहा। उसकी आज्ञा सुनते ही छतरलाल तो बाहर चला गया। पर शैलवती वहीं चुपचाप खड़ी रही। उसने पूछा,—"तू क्यों नहीं जाती?"

शैल०—यह मेरा पति है और बड़ी नाजुक हालत में है। मैं क्या? कोई औरत भी अपने आदमी को ऐसी दशा में छोड़कर नहीं जा सकती।

रानी—(बिगड़कर) दूर हो बेहया!

रानी के मुँह से 'दूर हो, निकलते ही उसका मुँह पीला पड़ गया और ऐसा मालूम हुआ जैसे शैतान ने चोटी पकड़कर उसे कमरे के बाहर कर दिया।

शैलवती के चले जाने के बाद रानी साँवलसिंह के पास गई और झुककर उसकी नाड़ी देखने लगी। इस समय उसका मुँह दीवार की तरफ था। इससे रानी ने नाड़ी देखते समय उसकी सूरत न देखी, पर ज्योंही रानी ने साँवलसिंह के मुरदनी छाये हुए मुँह को देखा त्योंही उसके मुँह से एक चीख निकल गई और उसने अपनी छाती पर इस तरह हाथ रख लिया जैसे किसी ने उसके सीने में खंजर मारा हो।

मैं-क्या मर गया ?

रानी—ओ कुत्ते ! तूने पहिले क्यों न बतलाया ? अब तो यही जी चाहता है कि तुझे भी जिन्दा दरगोर कर दूँ।

मैं—(भयातुर होकर) क्या नहीं बतलाया ?

रानी-शायद तुझे मालूम नहीं है। तू नहीं देखता है कि यह मेरा प्यारा 'देव' है। मुझे विश्वास था एक दिन मेरा प्यारा जरूर मेरे पास आवेगा। यही प्यारा देव आज से दो हजार बरस पहिले भी मेरे पास आया था। देवसिंह ! प्यारे देवसिंह ! आंखें खोलो !

मैं—रानी ! यदि हो सकता हो तो इसकी जान बचाओ। नहीं तो तुम्हारा देव अब कोई दम का मेहमान है।

रानी—हाँ तू ठीक कहता है। मेरी अक्ल मारी गई है।

मैं—देख लीजिये ! बेचारे का गला बोल रहा है।

रानी—हाँ हाँ, मैं भी तो देख रही हूँ। बेवकूफ ! तूने पहिले क्यों न खबर दी ? हाय ! तूने गज़ब किया !

मैं—तो क्या अब बिलकुल निराशा है ?

रानी—यह ले शीशी। इसका एक बूँद इसके मुँह में टपका दे। यदि यह अभी तक मरा नहीं है तो जरूर बच जावेगा।

अभी तक साँवलसिंह मरा नहीं था। पर उसकी नाड़ी छूट गई थी, उसका कहीं पता न था। छाती की धड़कन भी बंद होगई थी। दिलका हिलना डुलना भी न मालूम होता था। केवल उसकी आँखों के परदे हिल रहे थे। छुरी से साँवलसिंह का दांत उभारकर दवा उसके मुँहमें मैंने टपका दी। दवा को मुँह में टपका देते ही उसके होंठ सफेद होगये, नाक का बांसा फिर गया और आँखें पथरा गईं।

इस समय रानी जो उसे बड़े गौर से देख रही थी साँवलसिंह की ऐसी दशा देखतेही उसका चेहरा उतर गया और ऐसा जान पड़ने लगा मानों जैसे कोई उसका कलेजा छुरी से काट रहा है।

मैं-हाय! यह तो हिलता डुलता भी नहीं।

रानी-हाय! गजब होगया।

मैं-क्या मर गया?

रानी-क्या कहूँ!

मैं-प्यारे साँवल! प्यारे साँवल!!!

रानी-किसको बुलाता है?

मैं—अपने प्यारे साँवलसिंह को।

रानी-साँवलसिंह किसका नाम है? यह तो मेरा देवसिंह है। यह तो मेरा देवसिंह है। यह वही मेरा प्यारा है, जिसकी बाट आज मैं दो हजार साल से देख रही हूँ।

यह कहकर रानी ने दोनों हाथों से अपने मुँह को छिपा लिया। ठीक इसी समय मैंने साँवलसिंह के होठ को हिलते भी देखा। दो पल के बाद उसमें हिलने की ताकत आ गई, चार पल के उपरांत उसकी आँखों में ज्योति दिखलाई पड़ी। छः पलके पश्चात् उसके चेहरे का रंग बदल गया। बारह पल होते ही उसने करवट बदली और वह आदमी जिसे मैं मरा हुआ जानता था जीता दिखलाई पड़ने लगा।

मैं- कहिये! आपने कुछ देखा?

रानी-हाँ बच गया। यदि एक पल की और भी देर होती तो इसका पुनःजीवित होना असम्भव था। पर ईश्वर की कृपा से बच गया।

यह कह चुकने पर रानी ने मुहब्बत की जोश में उसको कई बार चूमा और चुपचाप एक चौकी पर उसके सिरहाने बैठ गई। पर साथही उसके दिल में एक नया भाव पैदा होगया। डाह की आग उसके हृदय में जलने लगी और वह द्वेष की देवनी बन गई। उसने मुझसे पूछा,-

"मुझे स्मरण नहीं है कि वह शैलवती कौनसी औरत है।"

मैं-यह आपही की प्रजा तो है।

रानी-इसका मेरे देव से क्या सम्बन्ध है ?

मैं-जहांतक मैं जानता हूँ इसने अपने रिवाज के अनुसार साँवलसिंह से विवाह कर उसे अपना पति बनाया है। इससे ज्यादा मुझे मालूम नहीं।

रानी-बस मैं जान गई। अब उसकी जिन्दगी भी हो चुकी।

मैं-इसके क्या मानी ?

रानी-वह मार डाली जायगी।

मैं- यह क्यों ? उसने क्या कसूर किया है ?

रानी-उसका अपराध यही है कि वह मेरी इच्छाओं के पूर्ण करने में बाधा डालनेवाली है। सुनो ! मैं वह औरत हूँ कि जिसे मैं चाहूँ, जिसे मैं दिलबर बनाऊं वह सिवाय मेरे और किसी को भी न चाहे। आज की रात को शैलवती का काम तमाम किया जायगा।

मैं-ईश्वर के लिये ऐसा न करना। किसी को अपने सुख के लिये मारना भारी अपराध है।

रानी-मेरे कामों में जो बाधा डाले उसे मारना यदि अपराध है तो यह जीवन ही जुर्मों का खजाना है, क्योंकि आदमी इसी जिन्दगी के लिये जानकारी और अजानकारी में हजारहों जानों को मार डालता है।

मैं–रानी ! मुझमें इतनी विद्या नहीं जो मैं आपसे बहस कर सकूँ, पर मैं इतना कहे देता हूँ कि यदि यह तुम्हारे कथनानुसार वही देवसिंह है जिसे तुमने आज से दो हजार साल पहिले मार डाला था तो क्या इस औरत को जो तुम्हारे देवसिंह को प्यार करती हो, मार डालना तुम उचित समझती हो? वाह ! अपने प्यारे के मिलने की खुशी में तुमने अच्छा आनन्द मनाया। मुझे डर है कि तुम्हें फिर पहले की तरह इंतजारी की तकलीफ न उठानी पड़े ।

रानी–अच्छा ! अगर तेरी ऐसी ही मरजी है तो उसे न मारूंगी । अच्छा जल्दी उस औरत को बुला, जिसमें मेरा इरादा फिर न पलटने पावे ।

मैं–बहुत खूब ।

यह कहता हुआ खुशी खुशी मैं उस कमरे से निकल आया। बाहर शैलवती बैठी हुई आठ आठ आँसू रो रही थी। मुझे देखते ही वह मेरी तरफ दौड़ी हुई आई और पूछने लगी,–"मेरे पति की अब कैसी दशा है ?,,

मैंने उत्तर दिया,–"तुम खातिरजमा रखो। रानी की दवा ने उसे अच्छा कर दिया है। अब चलो। तुम्हें वह बुलाती है।"

यह सुनकर वह मेरे साथ आई और उसे देखकर रानी ने पूछा,—"ओ औरत ! यह आदमी कौन है ? "

शैल०–यह मेरा पति है ।

रानी–यह तेरा पति किस तरह हुआ ?

शैल०–मैंने अपनी जाति के अनुसार इससे विवाह कर लिया है ।

रानी०–(झुँझलाकर) तू ने झकमारा है । यह तेरी कौम का नहीं था । इसलिये तेरे कौम की रिवाज इसपर नहीं चल

सकती। जान बूझकर तूने यह कसूर नहीं किया है। इसीलिये छोड़ देती हूँ। चल दूर हो! हटजा मेरे सामने से, फिर यहां कभी न आना। सीधे अपने घर को चली जा।

शैल०-रानी! मैं नहीं जा सकती।

रानी—क्यों?

शैल०—क्योंकि यह मेरा आदमी है। मैं इसकी औरत हूं; आप को क्या हक़ है जो आप मुझसे मेरा पति छुड़ाती हैं?

रानी—बस, यहाँ से चली जा।

शैल०—यह मेरा पति है। मैंने इसकी जान बचाई है। इसको मैं प्राण से अधिक चाहती हूँ। चाहे आप मुझे मार डालें, मैं इसे छोड़ कर नहीं जा सकती।

रानी—तू अपने लिए क्यों काँटे बो रही है?

शैल०—फिर जो आपकी तबीयत में आवे कीजिये।

रानी—तो क्या तू नहीं जायगी?

शैल०—नहीं।

यह सुन कर रानी ने अपना हाथ धीरे से उसके सिर पर रख दिया और कहा,—"दूर हो जा।" जहाँ रानी का हाथ लगा था वहाँ उसी समय उसके सिर के बाल बरफ की तरह सुफेद हो गये और वह बेताब हो कर जमीन पर गिर पड़ी। रानी ने पुनः कहा,—"हट! चली जा!!!"

रानी के मुँह से शब्द का निकलना था कि वह कठपुतली की तरह धीरे धीरे उठी और रोती हुई कमरे के बाहर चली गई। उसके निकल जाने पर उसने कहा,—"देखो अचरजसिंह! यदि मैं चाहती तो इसे अभी मुर्दा कर देती, किन्तु तुम्हारी सिपारिश ने मुझे ऐसा न करने दिया। इससे मैंने केवल

उसके सिर पर निशानी दे कर उसे यहाँसे चले जाने दिया।

मैं—आपने बड़ी मेहरबानी की।

रानी—अब मैं अपने कमरे में जाती हूँ और लौंड़ियों को अपने प्यारे देव की सेवा के लिए भेजती हूँ। सावधान! उससे न कहना कि मैंने शैलवती को इस तरह निकाल दिया है। यदि तू ने मेरी आज्ञा के विरुद्ध किया तो यह भी जान लेना कि मुझसे कोई बुरा नहीं है।

मैं—आपकी मुझ पर बड़ी कृपा है।

रानी—अब मेरे प्यारे का बुखार उतर गया होगा। कल वह जायेगा। उसी समय मैं भी जाऊँगी।

मैं—बहुत अच्छा।

रानी के चले जाने के बाद मैंने शैलवती की जान बच जाने के लिए ईश्वर को धन्यवाद दिया। फिर पाँव फैला कर मैं सुख की नींद सोया। सवेरे उठ कर अभी मैं अपने बिस्तरे पर बैठाही था कि रानी मेरे कमरे में आई। वह अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए थी और उसका सारा शरीर एक लम्बे चोंगे से छिपा हुआ था। इसके दो चार मिनट के बाद ही साँवलसिंह ने अंगड़ाई ले कर आँखें खोल दीं; यह देख खुशी के मारे रानी ने झट उसके गले में हाथ डाल कर उसके सिर को सादर चूम लिया।

साँवलसिंह ने कहा,—"शैलवती! तुमने अपना मुँह क्यों इस तरह छिपाया है; कहो कुछ हुआ तो नहीं है?

मैं—वत्स साँवलसिंह! कहो अब तबीयत कैसी है?

साँव०— मुझको बड़ी तेज भूख लगी है। (छतरलाल से) कहो इस समय मैं कहाँ हूँ?

छत०—मैं भी यहीं जानना चाहता कि मैं कहाँ हूँ।

साँव०—एँ! यह! स्त्री! यह तो मेरी शैलवती नहीं है?

रानी—वह किसी काम को गई है। अपनी जगह मुझे आप की सेवा के लिए छोड़ गई है।

यह सुन साँवलसिंह चुप हो कर सो गया। रानी ने मुझ से कहा,—"अचरजसिंह! देव अब संध्या को जागेगा। अब की बार जब यह जागेगा तब इसमें पहली ताकत आ जायगी अब तो मैं जाती हूँ। संध्या को दोनों आदमी को अपने कमरे में बुलाऊँगी।"

मैं—जैसी आप की मरजी।

इसके बाद रानी चली गई। उसके कहे अनुसार ही संध्या को साँवलसिंह उठा। भोजन तैयार था। उसने पेटभर खाना खाया। दवा की तासीर से उसमें पूर्व की सामर्थ्य आ गई थी और वह मेरे साथ रानी के पास जाने को तैयार हो गया।

मेरा प्यारा साँवलसिंह पहिलेही से एक खूबसूरत जवान था। उसके बाल सुनहले, और उसका रंग खूब गोरा था। पर दवा की तासीर से इस समय उसका सुफेद रंग कुँदन की तरह दमक रहा था। उसके चेहरे से सब परेशानी दूर हो गई थी। जब मैं उसके साथ रानी के कमरे में जो बैठी हुई हम लोगों की बाट देख रही थी, पहुँचा, तो वह उठ खड़ी हुई, खुशी और बड़ी तपाक से उसने साँवलसिंह की अगवानी की और कहा,—"अजनबी मेहमान, खुश तो हो?"

साँव०—सब आपकी कृपा का फल है।

रानी—मैं आशा करती हुँ कि सेवकों ने आपकी खिदमत अच्छी तरह की होगी।

साँव०—जी हाँ, आप की कृपाओं के लिए धन्यवाद है, पर मैं यह जानना चाहता हूँ कि शैलवती कहाँ है ?

रानी—मुझे तो मालूम नहीं ।

साँव०—ईश्वर जाने कहाँ चली गई ।

रानी—इन पगली मिजाज जंगली औरतों का क्या ठिकाना ।

साँव०—आपने क्या कहा ?

रानी—शायद आपकी बीमारी में उसे जागना पड़ा हो, इसी से वह भाग गई हो ।

साँव०—तो क्या वह न आवेगी ?

रानी—कौन जाने ?

साँव०—(मुझसे) चाचा जी ! शैलवती कहाँ गई ?

रानी—भला इनको क्या खबर !

मैं—मेरा उससे—

रानी—(हँस और बात काट कर) कोई और बात करो ।

साँव०—जैसी आज्ञा हो ।

रानी—आपकी बाट मैं बहुत दिनों से देख रही थी ।

साँव०—आपकी बड़ी मेहरबानी है ।

नवीं लहर

लाश का मशाल !

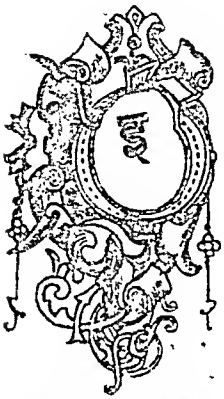

इसके दो दिन के बाद रानी ने खबर दी कि आज मैंने तुम लोगों के आगमन की प्रसन्नता में नाच की आज्ञा दी है और मजलिस सजने के लिए कह दिया है। इसके बाद ही उसने बुला भेजा और कहा कि नाच प्रारम्भ होने के पहिले तुम लोगों को गुफा की सैर करा देना चाहता हूँ। निदान मैं, बिल्लाली, साँवलसिंह और छतरलाल गुफा में उतर पड़े और रानी के आज्ञानुसार उसकी सैर करने लगे। इधर उधर घूमते घामते चारो आदमी एक बुर्जी पर जा पहुंचे जिसमें बहुत सी कबरें थीं। बड़े बड़े आदमियों की कबरें तो अलग अलग थीं, पर गरीबों की एकही कबर थी। उस कब्र की तरफ इशारा करके बिल्लाली ने मुझसे कहा कि इसमें कम से कम एक करोड़ आदमी गाड़े गये होंगे, अतएव, दिन भर तो मैं अपने साथियों के साथ कब्रोंही की सैर करता रहा। संध्या होने पर सब लोगों ने बैठ कर खाना खाया। जब खा पी चुके तो मैंने रानी से पूछा,—"यहाँ रोशनी का तो कोई सामान नहीं है; भला नाच गाना कैसे होगा?"

यह सुन कर रानी हँस पड़ी। उसके हँसतेही गुफा में एक बिजली सी चमक गई। सब लोगों ने देखा कि गुफा के कोनों से बहुतसी लाशें निकल मशाल की तरह जलने लगीं। यह हाल देख कर मैं बेंत की तरह काँपने लगा। जिस

की तरफ मैं आँखें उठा कर देखता मर्द और औरत की लाशेंही मशाल की तरह बलती दिखलाई पड़तीं। यह दृश्य छतरलाल से देखा न गया। उसने घबरा कर कहा,-"सब लोग नर्ककुण्ड में आ गये हैं क्या!" पर मैंने उसे इशारे से बोलने के लिये मना किया। इसके थोड़ी देर बाद बिल्लाली ने कहा,-"नाचने वाले हाजिर हैं।" रानी ने इशारे में कहा कि, हाजिर करो। साथही चारों तरफ से कुत्ते, शेर, बारह सिंघे लँगूर और बंदर गुफा में आ गये और उछलने कूदने लगे।

सचमुच में यह सब जानवरों की खाल ओढ़े हुए आदमी थे। इस जंगली और विचित्र नाच को देख कर मेरी तबीयत बड़ी बेचैन हो गई। अतः उठ कर मैं इधर उधर घूमने लगा। इतने में एक भेड़िये ने सिर उठा कर कहा कि, मेरे पीछे आओ। मैं आवाज़ सुनते ही पहिचान गया कि वह भेड़िये की खाल ओढ़े हुई शैलवती है। मैंने साँवलसिंह को मना किया कि क्यों बिचारी की जान के दुश्मन होते हो। पर उसने मेरा कहना न माना और उसके पीछे पीछे वह चला ही गया। शैलवती साँवलसिंह को एक ऐसी जगह में ले गई जहाँ बलती हुई मुर्दों की खोपड़ियों यानी अनूठी मशाल की रौशनी नहीं पहुँच सकती थी। इसके बाद वह बोली,-"मेरे प्यारे! क्या तुमने मुझे भुला दिया?"

साँव०—नहीं, प्यारी कभी नहीं। मैं तेरी तलाश में फिक्रमंद हूँ।

शैल०—रानी जो सब की मालिक है मेरी दुश्मन हो रही है और वह मुझे जरूर मार डालेगी!

साँव०—तो फिर क्या किया जावै?

शैल०—यदि इसी प्रकार दलदल से पार निकल चलें तो फिर वह कुछ बिगाड़ नहीं सकती ।

साँव०—मैं तेरे साथ भागने को तैयार हूँ ।

मैं—साँवलसिंह ! क्यों आफत में फँसने को तैयार होते हो?

शैल०—इनकी बात न सुनो; जल्दी करो ।

मैं—तुझको रानी के ताकत की खबर नहीं ? तू क्या करता है वह सब बैठी बैठी जान लेती है ।

शैलवती ने इस समय अपने ऊपर से भेड़िये की खाल उतार दी । मैंने इस वक्त भी उसके सिर पर उस सुफेद बाल को देखा जो शीशे की तरह चमक रहा था । अभी शैलवती और साँवलसिंह भागने की तैयारी कर ही रहे थे और मैं उनको समझाही रहा था कि मेरे पीछे हँसने की आवाज आई । मैंने जो फिर कर देखा तो रानी और बिल्लाली को खड़े पाया। रानी की भयानक सूरत देखकर मैं मृतप्रायः हो गया और शैलवती की तो यह दशा हो गई कि काटो तो बदन में लोहू नहीं ।

कई मिनट तक सब लोग चुप चाप खड़े रहे । आखिर में रानी ने कहा,-"मेरी दासी शैलवती ! तू यहाँ क्या कर रही है?"

शैल०—बस मुझे अब न सताओ । जल्द काम तमाम करो ।

रानी—यह फैसले की जगह नहीं है। मेरे कमरे में आओ ।

यह कह कर रानी ने एक गूँगे सेवक की तरफ इशारा किया । उसने शैलवती का हाथ पकड़ लिया । पर इसके साथ ही साँवलसिंह ने लपक कर उसको इतनी जोर का एक मुक्का मारा कि वह चकरा कर वहीं गिर पड़ा । यह दशा देख कर रानी मुस्कुरा पड़ी । फिर वह अपने कमरे की तरफ

चली। हम सब लोग भी उसके पीछे पीछे चले। अपने कमरे में पहुँच कर वह एक ऊँचे सिंहासन पर बैठ गई। तदुपरान्त मैं, साँवलसिंह शैलवती और एक खास दासी को छोड़ कर बाकी सब लोग वहाँ से चले गये।

सब के चले जाने पर रानी ने शैलवती से कहा,—"हाँ, अब कह, क्या कहा चाहती है।"

शैल०—मैं देवी नहीं हूँ, दानवी नहीं हूँ। पर मैं इस नवयुवक की स्त्री हूँ, मैंने इससे विवाह किया है। यह मेरा है, मैं इसकी हूँ। इससे मैं इसे छोड़ कर नहीं जा सकती।

रानी–भला तुझे क्या अधिकार है? तू एक तिनका है, एक चींटी है, तू पर है, फूँक देने से उड़ जा सकती है। भला तेरी क्या मजाल जो इससे मुहब्बत करे?

शैल–मैं जानती हूँ कि रानी भी मेरे पति के प्रेम फांस में फंसी हुई है। पर मैं इतना कहे बिना भी नहीं रह सकती कि तू नाहक एक गरीब कमजोर अपनीही जाति वाली औरत पर जुल्म के बादल बरसा रही है। याद रख कि इसका बदला तुझे जरूर मिलेगा। तू ताकतवर है, तुझ में सामर्थ्य है, इससे तू मुझ पर अत्याचार कर रही है, मेरे मुँह का नेवाला जबर्दस्ती छीन रही है। पर सर्वशक्तिमान ईश्वर तेरी इस हिमाकत को कभी नहीं सहेगा, तुझे योंही नहीं छोड़ेगा। चाहे तू मुझे मार डाल। और मैं जानती हूं कि तू अवश्य मुझे मार डालेगी (झुककर) ले, यह अपना तुच्छ प्राण पति के चरणों पर मैं न्योछावर करती हूं।

यह सुनते ही रानी अपनी जगह से उठी। उसका चेहरा इस समय क्रोध से लाल हो रहा था. उसने उठने के साथ ही

उसकी तरफ हाथ से इशारा किया। इशारा करना था कि शैलवती की इस समय भी वही दशा हुई जैसा कि उसकी पहिली मुलाकात के समय हुई थी। इस बार भी उसने दो चक्कर खाया। उसके चेहरे की रंगत उड़ गई, उसके आखों की पुतलियां पथरा गईं; होंट सूख गये और वह धमाके के साथ जमीन पर गिर कर मर गई। पहिले सांवलसिंह ने समझा कि वह जीती है। इससे उसके उठाने के लिये वह दौड़ा हुआ गया। पर जब उसने देखा कि वह ठंडी हो गई है तो उसके क्रोध की सीमा न रही। वह नीला पीला होकर रानी की तरफ झपटा। पर साथ ही उसने (रानी ने) अँगुली हिला दी। वह बेचैन हो गया। यदि उस समय मैं उसे न पकड़ लेता तो वह भी गिर पड़ता। होश में होने पर सांवलसिंह ने मुझे बतलाया कि उस समय उसकी छाती पर एक भारी मुक्का बैठा था। मुक्का लगने के साथ ही उसका असीम क्रोध व साहस भी उड़ गया और वह चुपचाप सिर झुका कर खड़ा हो गया।

रानी ने कहा,—"मेरे मेहमान! मेरा अपराध क्षमा करो।"

साँव०—ओ खूनी औरत! मैं, और तेरा कुसूर माफ कर दूँ? अगर मेरा बस चले तो मैं तुझे अभी मार डालूँ।

रानी—मेरे प्यारे! मैं बहुत दिन से तुम्हारी बाट देख रही थी। अब वह समय आ गया कि मैं अपना असली हाल तुम से बयान करूं। मेरे प्यारे! तुम मेरे 'देव' हो और मैं तुम्हारी स्त्री हूँ। मैं दो हजार बरस से तुम्हारी राह देख रही थी, अब जाकर मुझे तुम्हारी सूरत देखनी नसीब हुई है। यह तुम्हारे और मेरे बीच की कांटा थी। इससे इसको यमलोक पहुँचा दिया है।

साँव०-ऐ खूनी औरत! तू झूठ बोलती है। मेरा नाम देवसिंह नहीं है। बल्कि मैं उसी घराने से हूँ।

रानी-मेरे प्यारे! मैं सच कहती हूँ। तुम मेरे वही देवसिंह हो और अब पुनः दो हजार बरस के बाद पैदा हुए हो।

साँव०-नहीं, नहीं, मैं देवसिंह नहीं हूँ। और मैं भला तेरा पति! ईश्वर करे मुझे तेरा मुंह भी देखना न पड़े। तुझसे तो 'दानवी' अच्छी है।

रानी-प्यारे! तुम ने मेरी सूरत नहीं देखी है; इसी से ऐसा कहते हो। मैं 'देवी' से भी बढ़कर लावण्यमयी हूँ। जिस समय तुम मेरी सूरत देखोगे उस समय जी जान से मुझपर लट्टू हो जाओगे। यह देखो! मेरे प्यारे; यह देखो!!!

यह कहकर रानी ने अपने मुंह से नकाब हटा लिया। मुझे ऐसा जान पड़ा जैसे अंधेरे घर में चन्द्रदेव निकल आये उधर सांवलसिंह का हाल सुनिये। वह उसका सौंदर्यमय चेहरा देखते ही आश्चर्य के समुद्र में डूब गया। उसने चमकित और विस्मित होकर पूछा,—"हैं, क्या तू मनुष्ययोनी में है?"

रानी—हाँ प्यारे! मैं मनुष्ययोनी में हूँ। तुम्हारी स्त्री हूँ। और दो हजार बरस से तुम्हारे लिये जीवित हूँ। प्यारे देव! मुझे इसकी पूरी पूरी आशा थी कि तुम दुबारा पैदा होकर एक दिन अवश्य मुझे मिलोगे। वाह रे ईश्वर! आज तूने वह दिन दिखाया और मेरी आशा बर आई।

साँव०—या जगदीश्वर! यह क्या मामला है?

रानी—ऐ प्यारे पति! अब क्यों देर करते हो? आओ, गले से मिल जाओ।

पहिले तो साँवलसिंह चकरा गया। पर ज्योंहीं रानी ने उसकी तरफ तिरछी निगाह से देखा,—नैनसर चलाया कि उससे रहा न गया। वह विवश हो कर रानी के गले से जाकर लिपट गया और दोनों एकदूसरे को बडी मुहब्बत के साथ प्यार करने लगे।

रानी—प्यारे! मेरे प्यारे देव। देखो, जो मैंने कहा था कि तुम मेरी शकल देखते ही सब कुछ भूल जाओगे। वही हुआ न? भला इस दासी में इतनी हिम्मत कहाँ?

यह सुन कर साँवलसिंह ने सिर झुका दिया। मैंने देखा कि रानी ने अपनी दासी से कुछ कहा। वह गई और दो सेवकों को बुला लाई जो शैलवती की लाश को उठा ले गये। इसके बाद फिर मैं उसके (रानी के) विषय में सोचने लगा। पर आज भी मेरी समझ में कुछ न आया कि यह है "देवी या दानवी?"

दसवीं लहर

जिन्दे मुरदे की भेंट।

जब सेवक, विचारी शैलवती की लाश को उठाकर चले गये तो उस कमरे में केवल रानी साँवलसिंह और मैं रह गया। रानी पहिले तो थोड़ी देर तक सोचती रही। फिर उसने साँवलसिंह का हाथ पकड़ लिया और कहा,—

"मेरे प्यारे! मेरे साथ आओ, मैं तुम्हें दिखलाऊँ जहाँ दो हजार बरस से सो रही हूँ।"

यह कह मुझको और साँवलसिंह को उसी तायखाने में ले गई, जहाँ मैं उसको एक लाश के पास बैठी हुई देखा था। तीनों आदमी उसी लाश के पास जिसके ऊपर एक सफेद चादर पड़ी हुई थी खड़े हो गये। रानी ने झुककर लाश के सरको चूमा। फिर वह साँवलसिंह से बोली,—"प्यारे! आज से दो हजार बरस पहिले तुम इस शरीर में जिस पर चादर पड़ी हुई है, आए थे। प्यारे देव! देखो, तुम्हारे प्रेम में मैं कितना दृढ़ रही। दो हजार साल से मैं तुम्हारे इस मृत शरीर की पूजा कर रही हूँ और दो हजार वर्ष से मैंने अपने इस असार शरीर को बचा रक्खा है। प्यारेदेव! तुम डरते क्यों हो? तमाम लोग मरने के पहिले इसी प्रकार जीते थे। इस नश्वर संसार में लोग जन्मतेही मर जाते और फिर पैदा होते हैं। यह मरना क्या है? कुछ भी नहीं। सिर्फ जामा बदलना है। जब प्राण पखेरू शरीर के पींजड़े से घबरा जाता है तो इसे छोड़ भागता है। सच पूछो तो कोई मरता

नहीं है। जिस सूरत में लोग एक बार इस संसार में आते हैं; कुछ दिनों के बाद उसी में फिर आते हैं। इस पर तुम यह पूछ सकते हो कि फिर अगली बातें याद क्यों नहीं रहती हैं ? उसका यही उत्तर हो सकता है कि इस अदल बदल में बहुत दिन बीत जाते हैं। इससे अगली बातों का ख्याल नहीं रहता, जो कुछ याद भी रहता है जन्मने और मरने के दुःसह दुःख में भूल जाता है। प्यारे देव ! आज तुम जिस सूरत में खड़े हो उसी रूप में, इसी शकल में आज से दो हजार वर्षपहिले भी इस संसार में आए थे। यदि तुम्हें मेरी बातों का विश्वास नहो तो चादर उठा कर देख लो।"

यह सुनकर साँवलसिंह ने मेरी तरफ और मैंने उसकी तरफ देखा। पर दोनों में से किसी को भी इतनी हिम्मत न हुई कि चादर उठाकर देखें। जब रानी ने दोनों आदमी को विस्मित देखा तो उसने स्वयं लाश के ऊपर से चादर उठा ली; देखते ही हम दोनों चमकित होकर पीछे हट गये।

सच मुच में वह लाश बिलकुल साँवलसिंह की हमशकल थी। उसमें और साँवलसिंह में बाल बराबर भी फर्क नहीं था। यहाँ तक कि लाश के एक एक बाल साँवलसिंह के एक एक बाल से मिलते थे। जिस प्रकार साँवलसिंह की हथेली पर एकही खाल थी, उसी प्रकार उस लाश की हथेली पर भी एकही खाल थी।

"हे ईश्वर !" साँवलसिंह ने बड़े आश्चर्य से कहा।

मैंने कहा,—"क्या मैं स्वप्न देख रहा हूँ ! या जाग रहा हूँ।"

रानी—नहीं नहीं। जाग रहे हो और होश हवाश में हो।

साँव०—ईश्वर के लिए उसे ढाँप दो। अब मुझमें अपने मृत शरीर के देखने की ताब नहीं है।

रानी- जरा ठहर जाओ। जिसमें मैं अपना पगलापन दिखला दूँ। अचरजसिंह! इसके सीने से कपड़ा हटाओ।

मैंने लाचार हो कर रानी की आज्ञा पालन की और साँवल सिंह के मृत शरीर की छाती से कपड़ा हटा दिया, तो वास्तव में उस लाश की छाती पर कलेजे के पास "खंजर" का चिन्ह दिखलाई पड़ा।

रानी—(उसी निशान को दिखलाकर) देखा मेरे प्यारे! उस जमाने में, उस वाराङ्गना की डाह से मैंने तुम्हें खंजर मारा था। हाय! क्रोध में मुझसे यह भयानक अपराध हो गया था। उसी समय से मैं आज तक पछताती रही। किसी तरह ईश्वर ईश्वर करके इतने दिन बाद तुम आज फिर कुशल पूर्वक मेरे पास आ गये हो। यह लाश आज दो हजार वर्ष से मुझे तसल्ली देती आ रही है और तुम्हारी अनुपस्थिती में मैं बराबर रात को इसी के पास जमीन पर सोया करती थी। अब तुम मेरे पास आ गये हो। इससे अब इसकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है। अच्छा हो कि मिट्टी मिट्टी में मिल जाय।

यह कह कर रानी ने आलमारी से किसी अर्क की एक भरी बोतल निकाली। जिसका मुँह मजबूती के साथ बंद किया हुआ था। उस ने बड़ी सफाई के साथ एक पत्थर के टुकड़े से उसके मुँह को तोड़ कर तमाम अर्क उस लाश के ऊपर छिड़िक दिया और उसमें का बहुत सा हिस्सा उसके मुँह में डाल दिया। मैं बड़े गौर से रानी के उस काम को देख रहा था, जो इस भय से बराबर डर रही थी कि कहीं अर्क ऊपर न आपड़े। अर्क का लाश के ऊपर पड़ना था कि वह धुआँ बन कर उड़ गई और तमाम हड्डियाँ सफेद राख बन

गई। उस राख से रानी ने थोड़ी सी राख उठा ली और उसे मल कर कहा,—"ऐ मिट्टी! मिट्टी से मिल जा" (फिर साँवलसिंह से) अच्छा! ऐ प्यारे देव! अब जाओ और सोओ (मुझ से) अचरजसिंह तुम भी जाओ और सो रहो।

मैं तो पहिले ही से प्रार्थना कर रहा था कि किसी तरह इस देवी सूरत दानवी से छुट्टी मिले, जब मैं रानी के पास से अपने कमरे में आया तो साँवलसिंह के ऊपर से भी उसका जादू हटा। उसे शैलवती याद आई और वह उसकी याद में हाए हाय करके बाल नोचने लगा; बोला,—"हाय, मैं किस आफत में फँसा हुआ हूँ।"

मैं—मुझे तो सब बातें अजूबी मालूम होती हैं।

साँव०—मुझको धिक्कार है कि मैंने शैलवती को यों मरते देखा और जरा हाथ तक न हिलाया।

मैं—तुम कर ही क्या सकते थे?

साँव०—उस समय को आग लग जाय जब कि मैंने उस ताम्रपत्र की लिखावट को पढ़ा।

मैं—अफसोस करने का मौका नहीं। किस्मत में ऐसा ही लिखा हुआ था।

साँव०—जी चाहता है कि आत्महत्या कर लूँ।

छत०—खूब अच्छा रास्ता सोचा है। मेरा भी ऐसाही इरादा है।

इस समय तीनों आदमियों की तबीयत ऐसी खराब होगई कि सब लोग सो गये। तड़के जब आँख खुली तो मैंने बिल्लाली को सिरहाने खड़ा पाया, जो रानी के यहाँ से बुलावा लेकर आया था। हम लोगों के उसकी सेवा में पहुंचतेही वह

उठ खड़ी हुई और बड़ी प्रसन्नता से जोश के साथ साँवलसिंह को अपनी बगल में ले कर बोली,—"ऐ मेरे प्यारे देव! मैंने 'सत्यमंदिर' में जाकर आग में नहाया है। इससे मुझे अमरजीवन प्राप्त हुआ है। तुम अभी नश्वर शरीर में हो। इससे जबतक तुम भी आग में न नहा लोगे तब तक तुम मुझसे विवाह नहीं कर सकते। यदि इस समय मैं तुम्हें अपना पति बना लूँ तो तुम तुरंत मेरे शरीर की आग से जलकर राख हो जाओगे। पर मेरे प्यारे! तुम मेरे हो और मैं तुम्हारी हूँ। इससे तुम्हें 'सत्यमंदिर' की आग में नहाकर अनश्वर शरीर बनाना चाहिये। अचरजसिंह! मैं तुम्हें भी साथ ले चलूँगी। और अमर जीवन लाभ कराऊँगी।

मैं—आपकी आज्ञा पलकों पर है। किंतु यदि अमरजीवन लाभ कर इसी असार संसार में रहना है तो फिर मुझे ऐसा अमरजीवन नहीं चाहिये। मेरी जान में तो मौत बड़ी अच्छी है जो मनुष्य मात्र को संसारी झंझटों से छुड़ा देती है।

रानी—तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। परन्तु प्रेमफांस एक ऐसी चीज है जो संसार को छोड़ने नहीं देती। इसी से सब को अमर जीवन की आकांक्षा होती है।

मैं—प्रेम का आनन्द तो तभी है जब किसी प्रकार की चिंता न रहे। यदि दुर्भाग्यवश भाग्य फूटा निकला तो ऐसे अमरजीवन को धिक्कार है। रानी! इससे तो मैं उस तीन अक्षर ही यानी मरना को पसंद करता हूँ जिसमें मैं मर जाऊँ और लोग मुझे भूल जायँ।

रानी—मेरे प्यारे! तुम यहाँ किस तरह आये?

साँव०—वराङ्गना की वसीयत को पढ़कर।

रानी—क्यों अचरजसिंह ! मैं भी तो यही कहती थी कि जब समय अच्छा आता है तो शत्रु के हाथ से भी भलाई हो जाती है। इस शैलवती को मुझसे बड़ी घृणा थी। वह जान की फांसी थी। मुझे भी अबतक उससे नफरत है। दो हजार साल बीत गये कि उसने उस समय मुझे मिलने न दिया था। पर अब उसने तुम्हें आप ही आप मेरे पास भेज दिया है।

मैं—बेशक ! तुम जो कहती हो वह बिलकुल सच्च है।

रानी-(अपने सीने से कपड़ा हटाकर) प्यारे देव ! दो हजार साल बीत गये जब कि मैंने तुम्हें सीने में खंजर मारा था। लो, यह खंजर हाजिर है; इसे मेरी छाती में मार कर अपना बदला ले लो।

साँव०-हाय रानी ! भला उस वक्त जब कि तुमने शैलवती को मार डाला, मुझसे ऐसा काम नहीं हुआ तो भला अब यह बात कैसे हो सकती है ? मैं स्वयं अपनी जान दे दूँगा; पर ऐसा काम करने की मुझमें हिम्मत नहीं है।

रानी-अब जाकर मुझे मालूम हुआ है कि तुम्हारे दिल में भी मेरी मुहब्बत पैदा हो गई है। अब जीवन बड़े आनन्द से कटेगा। इस' सत्य मंदिर' से वापिस आकर मैं तुम्हें दुनियां के परदे पर ले जाऊँगी और वहाँ तुम्हें नई और पुरानी दुनियां की मालिक बनाऊँगी।

छत०-हाँ हाँ, जल्दी कीजिये और मुझे भी कोई ऊँचा दरजा दीजिये।

रानी-आज ही संध्या को सब लोग मंदिर के लिये चल पड़ेंगे। कुल जमा वह तीन दिन का रास्ता है। यदि मैं रास्ता न भूल गई और आशा है कि कभी नहीं भूल सकती, तो तीसरे

दिन कुशलपूर्वक मंदिर में पहुँच जाऊँगी और आग में तुम्हें नहलाकर लौट आऊँगी।

छत०–ईश्वर करे ऐसा ही हो।

रानी जाओ और तैयार हो कर तीसरे पहर आ जाओ। छतरलाल! तुम न चलना।

छत०–क्यों? सब के पहिले मैं चलूँगा।

रानी–(हंसकर) नहीं। इसका जाना ठीक नहीं।

छत०–वाह! क्यों नहीं!!! क्या हिन्दुस्तान और कालोनियों की तरह यहाँ भी काले की कदर नहीं है? क्या यहाँ भी गोरा होना चाहिये, तब उसके लिये चारों तरफ चैन चान होगा? मेरी रानी! कोई ऐसी तदबीर निकालो कि मैं भी साथ ही साथ चलूँ। (हंसकर) अहहह! आजकल गोरे चमड़े की चारो तरफ शावसी और खूब कदर है!

ग्यारहवीं लहर

सत्यमंदिर।

नी के आज्ञानुसार तीनों आदमियों ने जल्दी जल्दी सफर की तैयारी की। रानी ने पहिले ही से बता दिया था कि तीन दिन में लौट आवेंगे। इससे उतनी ही चीजें ले चलना चाहिये जो बहुत ही आवश्यकीय हों। इससे मैंने तमाम सामानों को जो डोंगी पर लादकर साथ लाया था वहीं छोड़ दिया। केवल तीनों आदमी कपड़ा पहिन कमर में खंजर

और पिस्तौल लगाकर रानी की सेवा में जा उपस्थित हुए। वहाँ वह भी पहिले ही से तैयार थी। तीनों आदमियों को तैयार देखते ही उसने कपड़े के ऊपर से एक काला चोंगा पहिन लिया; इसके बाद फिर साथ साथ चल पड़ी।

गुफा के बाहर निकलते ही मैंने विलाली को छः गूँगे और बहरे कहारों के साथ पालकियाँ लिये खड़े पाया। सब लोग पालकियों में सवार होकर लक्षस्थान के लिये चल पड़े। बहुत सी उबड़ खाबड़, नीची ऊंची जमीनों से चलकर, पहाड़ की चोटियों, खाइयों और चढ़ाइयों को पार कर अन्त में हम लोग एक मंदिर में जा पहुंचे। यह मंदिर बहुत ऊंचा था। वह आठ एकड़ से ज्यादा जमीन घेरे हुए था। इसमें पहुँचते ही सब लोग मय रानी के पालकी से उतर कर इधर उधर घूमने फिरने लगे। इस मंदिर के बीचों बीच में एक चौकोर चबूतरे के ऊपर काले पत्थर का एक भारी गोला जो कम से कम अस्सी गज लम्बा रहा होगा, रक्खा हुआ था और उस गोले के ऊपर एक परी जो संगमरमर की बनी हुई थी, खड़ी थी। इस मूर्ति का सारा शरीर नंगा था। केवल मुंह नकाब से ढंका हुआ था, जो बड़ी कारीगरी से एक सफेद पत्थर का बनाया हुआ था। इस पत्थर की परी के पर बिलकुल खुले हुए न थे; वरन् कुछ खुले और कुछ सिकुड़े हुए थे।

मैंने पहिले तो उसे बड़े आश्चर्य से देखा; फिर पूछा,—"यह परी कैसी है?"

रानी—ओह! क्या तुम नहीं समझे?

मैं—नहीं। मेरी समझ में कुछ भी न आया।

रानी—यह पत्थर की मूर्ति 'सत्य' है और यह चबूतरा

संसार है। सच्चाई गोले पर खड़ी है और संसार के लोगों से पुकार पुकार कर कह रही है कि आओ, मेरे मुँह से नकाब हटाओ।

मैं—हाँ। अब समझ में आया।

रानी—देखो! उसके परों पर क्या लिखा हुआ है।

मैं—हाँ, कुछ लिखावट तो मालूम होती है। पर मैं तो उसे पढ़ नहीं सकता।

रानी—उसपर लिखा हुआ है कि मैं 'सच्चाई' हूँ जिसकी तलाश सबको है। दुनियां का प्रत्येक आदमी मुझे ढूँढता फिरता है। पर नहीं पा सकता। क्योंकि उसका दिल सदा मैला और स्वार्थमय रहता है।

मैं—निस्सन्देह! यह लिखावट बिलकुल सही है। इस संसार का प्रत्येक मनुष्य 'सच्चा' होने का दावा करता है। परन्तु जहां कोई ऐसी बात आई जिसमें उसका नुकसान पड़ता है, तहां झट वह स्वार्थी हो जाता है और सच्चाई उससे कोसों दूर भाग जाती है।

इसी प्रकार की बात चीत में मैंने सबके साथ वह रात उसी चबूतरे पर बिताई। प्रातःकाल जब रानी सोकर उठी तो उसका चेहरा उतरा हुआ था। जिसे देखकर मैंने पूछा,—"आज आपका चेहरा उतरा हुआ क्यों है?"

रानी—आज मैंने बहुत बुरा स्वप्न देखा है।

मैं—स्वप्न बिलकुल ख्याली और असत्य होते हैं।

रानी—मेरा दिल गवाही देता है कि आज मुझपर कोई भारी आफत आनी चाहती है। प्यारे देव! प्यारे देव! यदि कहीं मुझे कुछ हो गया तो क्या तुम भी इसी प्रकार जैसा कि

मैंने किया है, मेरे दुबारा आने तक मेरी बाट देखते रहोगे ? हाय भाग्य ! हाय तकदीर ! ! हाय किस्मत ! ! !

विल्ला०—(हाथ जोड़कर) पालकियाँ तैयार हैं !"

रानी—नहीं विल्लाली ! अब पालकियों की आवश्यकता नहीं है। तुम दो दिन तक यहीं मेरी बाट देखो, दो दिन के बाद सब लोग लौट आवेंगे। यदि कुछ और भी देर हो गई तो कहीं जाना नहीं (फिर छतरलाल को) यह भी यहीं रहे। मेरे साथ यह चल कर क्या करेगा।

छत०—ईश्वर के लिये मुझे भी साथ लेती चलो।

मैं—इसके साथ में चलने से कुछ हानि तो नहीं दीखती।

छत०—रानी साहबा ! यदि आप मुझको यहीं छोड़ जायंगी तो मैं आत्महत्या कर लूँगा। (हंसकर) मेरा चलना बहुत जरूरी है। मेरी इच्छा है कि मैं भी आग में स्नान करूँ और गोरा होजाऊँ ताकि जब मैं हिन्दुस्तान में जाऊँ तो वहाँ के शासनकर्ता लोग मुझे गोरा देखकर मेरी कदर करें और शायद कभी किसी जुर्म में गिरफ्तार हो जाऊँगा तो झट वे कानून को उलट फेरकर मुझे बचालेंगे।

रानी—छतरलाल ! यहाँ दिल्लगी का मौका नहीं। और यह भी जान रख कि यदि तुझे कुछ नुकसान पहुंचा तो मैं उसका जिम्मेदार नहीं होऊँगी।

छत०—मेरे भाग्य में जो कुछ लिखा होगा उसे तो कोई टाल नहीं सकेगा।

रानी—बहुत अच्छा। यह चिराग और तख्ता उठा ले।

यह सुनकर छतरलाल खुशी खुशी साथ हो लिया। रानी, साँवलसिंह, छतरलाल और मैं 'सत्यमंदिर' से निकलकर

पैदल अमरमंदिर के लिये चल पड़े। किसी प्रकार सब लोगों ने उस विकट रास्ते का आधा मील पार किया। फिर एक ऐसी विकट, अंधेरी और दुशवार घाटी में पहुंचे कि वहाँ का हाल बयान करते हुए भी मेरे रोंगटे खड़े हुए जाते हैं। जिस रास्ते से सब लोग जा रहे थे वह एक दो फीट चौड़े पुल की सूरत में भयानक, विकट और रोमांचित करनेवाले गारों के ऊपर बना हुआ था और ऐसा जान पड़ता था कि अभी अभी खंदक में गिरा चाहते हैं। जिस समय मैं अपने चारों तरफ देखता तो खून सूख जाता था। मेरे आगे अंधेरे और गुफा के कारण कुछ भी न दिखलाई पड़ता था। इसी भयानक और विकट मार्ग से सब लोगों ने एक पहाड़ के भीतर प्रवेश किया। यहाँ पर अंधेरा भी अंधेरे की सूरत देख कर भागा जाता था।

विकट अंधकार देखकर मेरी हिम्मत टूट गई। पर रानी ने समझा बुझाकर स्वयं पथप्रदर्शक का काम लिया। उसके साहस को देखकर मेरे हृदय में पुनः इसी विचार ने जड़ बाँधी कि यह है "देवी या दानवी?" मैं यही सोचता और रानी के पीछे पीछे चला जाता था। यहां पर छतरलाल के हाथ वाली जलती हुई दीया ने भी बड़ा काम किया। उसी के सहारे मैं एक जगह गिरते गिरते बचा। इसके अतिरिक्त कई जगह खाई में मेरे पाँव फिसल पड़े; पर मृत्यु नहीं थी, इससे बचता गया। किसी प्रकार गिरते पड़ते हजारों आपदें सहते हुए सब लोग एक चट्टान पर पहुंचे जो बिल्लौर की थी। उस पर मेरा पैर पड़ना था कि, वह बेंत की तरह काँपने लगी। उसकी यह दशा देखकर छतरलाल के मुँह से एक

भयानक चीख निकल गई। पर रानी ने उसे समझा बुझाकर कहा कि, डरो नहीं, अब सब लोग अमरमंदिर के समीप पहुंच गये हैं। किसी प्रकार सब लोग बिल्लौरी पत्थर को तय करके एक ऐसे पहाड़ में जा पहुँचे, जिस का रंग हरा और पीला था।

रानी–अचरजसिंह! तू जानता है कि यह कौन सी जगह है?

मैं–मुझे क्या मालूम।

रानी–यही अमरमंदिर है। इसी जगह वह आग आवेगी जिसमें नहाने से अमर जीवन प्राप्त होता है।

मैं–धन्य हो परमात्मा!

रानी–(साँवलसिंह से) प्यारे देव! पहिले, जिसको आज दो हजार साल हो गये, जब मैं तुमको और वाराङ्गना को यहाँ लाई थी तो तुमने एक आदमी की लाश यहाँ देखी थी।

साँव०—मुझे तो जरा भी याद नहीं।

रानी–हाँ कैसे याद रह सकता है। यह आज की बात तो है नहीं; बल्कि इसको दो हजार साल हो गये हैं।

मैं–वह लाश किसकी थी?

रानी–वह लाश एक बड़े महात्मा ऋषि की थी। उन्होंने पहिले पहल इस अमरमंदिर को ढूँढ निकाला। पर उस महात्मा की बुद्धि असाहसी और तेरी ही तरह थी। वह भी कहा करते थे कि मनुष्य का ज्यादा दिन जीना ठीक नहीं; क्योंकि वह इस नश्वर संसार में मरने ही के लिये भेजा गया है। वह दिन रात इसी में रहते थे और सप्ताह में केवल एक बार खाने पीने के लिए 'सत्यमंदिर' में जाया करते थे। मैं अप–

नी चतुराई और अवर्णनीय सुन्दरता के कारण उन तक पहुंची और उनसे यह भेद मालूम करके इस हरे और पीले पर्वतों में आई। पर वह मुझे इस अमरअग्नि में नहाने की आज्ञा न देते थे। लाचार मैंने यह सोचकर ज्यादा जिद्द करना ठीक न समझा, क्योंकि वह महात्मा बहुत ही बूढ़े थे और मुझे आशा थी कि वे जल्दी ही इस असार संसार को छोड़ स्वर्ग को सिधारेंगे। अतएव ऐसा ही हुआ भी। प्यारे देव! जब उस समय मैं तुमको और वाराङ्गना को यहाँ साथ लाई थी तो उस महात्मा को मरे थोड़े ही दिन हुए थे और उनकी लाश उसी जगह पर पड़ी हुई थी जहाँ कि अचरजसिंह बैठा हुआ है।"

रानी की यह बात सुनकर मैंने जो चारों तरफ़ हाथ मारा तो मेरे हाथ में एक दांत आ गया। जो पीले हो जाने पर भी आज तक वर्तमान था। जब उसे मैंने रानी को बड़े चाव से दिखाया तो उसने कहा,—

"यह मृत-महात्मा की निशानी है।"

मैं-ओह! इतना बड़ा शरीर मिट्टी में मिल गया। और अब सिर्फ एक दाँत बचा हुआ है?

रानी-प्यारे देव! अब मेरा बाकी जीवनवृत्तान्त भी सुन लो।

साँव०-अच्छा कहो।

रानी-निदान जब मैं तुमको और वाराङ्गना को लेकर यहां आई तो बूढे महात्मा मरे पड़े थे। इस लिये मैंने बिला रोक टोक, पर डरते डरते उस पवित्र आग में स्नान किया और पहिले से हजार दरजे खूबसूरती में बढ़कर उसमें से निकल

आई मैंने फिर तुम से कहा कि वराङ्गना छोड़ दो तो तुम्हें भी आग में नहला कर अमर जीवन लाभ करा दूँ। पर तुमने मेरी बात न मानी और वराङ्गना की परछाँई छोड़ना भी स्वीकार न किया। निदान क्रोध के वश में आकर मैंने तुम्हारे ही कमर से खंजर निकाल कर तुम्हारी छाती में भोंक दिया तुम्हारी ऐसी दशा देखकर वराङ्गना ने मुझे हजारों श्राप दिये। पर मैंने उसे कुछ भी न कहा। और न उसके जादूगरी की परीक्षा ही की, वरन् उसे दलदल के पार भेज दिया। अतः अब मुझे मालूम हुआ कि वह गर्भवती थी और उसने इसी लिये वसीयत की, जिसमें कि तू पुनः मेरे पास आवे।

साँव०—बस यही तुम्हारी कहानी है ?

रानी–हाँ इतना ही मेरा किस्सा है। मैं पैरों पर गिर तुमसे माफी चाहती हूँ। ऐ प्यारे ! अब तुम मुझे रानी न समझो, बल्कि दासी जानकर मेरा सिर जमीन से उठाओ मेरी आंखों से अपनी आंखें मिलाओ।

यह कहकर उसने अपना सिर साँवलसिंह के पैरों पर डाल दिया। साँवलसिंह ने कहा,–

"रानी.. ....."

रानी–मुझे रानी न कहो।

साँव०–रानी ! मैं तुम्हें सच्चे दिल से चाहता हूँ; जहाँतक तुम्हारे हाथों से मुझे दुःख पहुँचा है क्षमा करता हूँ और आशा है कि ईश्वर भी क्षमा करेंगे।

यह कह साँवलसिंह ने जमीन से रानी का सिर उठाकर उसकी आँखों से आँखें चार कीं।

रानी—अब तुम मेरे पति हुए।

साँव०—हाँ मैं तेरा पति हुआ ।

रानी—ईश्वर को धन्यवाद है कि मेरी मंशा बर आई ।

मैं—आपकी बलिहारी है ।

रानी—तुम भी सुखी रहो ।

छत०—वह पवित्र आग कहाँ है ?

रानी—प्यारे देवसिंह ! अब मैं अपने देश की रीति के अनुसार कुछ रशमें पूरी करती हूँ । (सिर झुकाकर) देखो । मैं सिर झुकाती हूँ । यह इस बात का चिन्ह है कि आज से तुम मेरे मालिक हुए और मैं तुम्हारी दासी हुई । (साँवलसिंह के होठों को चूमकर) देखो । मैं तुम्हारे ओंठ चूमती हूँ, यह इस बात को निशानी है कि आज से मैं तुम्हारी प्रेमपात्री, दुःख की घड़ी में सहायकारिणी स्त्री हुई । (अपनी छाती पर हाथ रखकर) यह देखो, मेरा दिल कहता है कि अब मैं तुम्हारी मुहब्बत के कारण पवित्र और तमाम पापों से निर्मल हो गई हूँ । प्यारे देव ! मैं कसम खाती हूँ कि मैं तमाम उम्र तुम्हारी ताबेदारी करूँगी, इज्जत करूँगी और सदा तुम्हारी प्रेम-पात्री बनी रहूँगी । हाय ! एक बार तुम कालचक्र की कराल गति के कारण मेरे पास से चले गये थे, पर अब फिर उसी की गति के अनुसार पुनः उत्पन्न होकर मेरे पास आये हो,—अब मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगी । (होठों को दुबारा चूमकर) देखो, मैं तुम्हारे होठों को पुनःचूमती हूँ, जिस के साथही अपना सारा शरीर, नये और पुराने संसार की बादशाही तुम्हारे ऊपर न्योछावर करती हूँ । प्यारे ! अब तैयार हो जाओ । अब वह पवित्र आग चली आ रही है ।'

वास्तव में इस समय मेरे कानों ने एक ऐसी आवाज सुनी, जैसे करोड़ों साँप एक साथ फुफकारी मार रहे हैं। यह फुँफकारी की आवाज दम दम पर पास आती जाती थी। थोड़ी देर के बाद वह फुँफकारी की आवाज बिजली की कड़-कड़ाहट से बदल गई और साथही मैंने देखा कि आग की एक भयानक नदी सोने की तरह चमचमाती हुई चली आ रही है।

उसे देख कर रानी ने कहा,—" प्यारे ! यह वही पवित्र आग है। अब अपने कपड़े उतार कर निडर हो इसमें कूद पड़ो। कपड़े जरूर उतार डालो, क्योंकि यह पवित्र अग्नि नश्वर शरीर को नहीं, परन्तु कपड़ों को अवश्य जला कर खाक कर देती है।

साँवलसिंह ने उत्तर दिया,—"प्यारी ! मैं डरपोक नहीं हूँ। पर मेरे दिल में सन्देह है कि यदि मैं जल गया तो जान भी चली जायगी और तुम भी हाथ से छूट जाओगी।

रानी—(कुछ सोच कर) ठीक ! तुम्हारा सन्देह यथार्थ है।

साँव०—पर मैं तुम्हारी आज्ञा पालन करने को तैयार हूँ। यदि कहो तो इसमें कूद पड़ूँ।

रानी—नहीं ठहरो। पहिले मैं इसमें नहा लूँ, जिसमें तुम्हारे दिल का सन्देह जाता रहे।

साँव०—जैसी तुम्हारी आज्ञा।

मैं—जिस समय आप स्नान कर चुकेंगी उस समय मैं भी नहाऊँगा और इसकी तासीर अजमाऊँगा।

रानी—(हँस कर) भला, तुझे समझ तो आई।

मैं—इस समय मेरे हृदय में सदा जीवित रहने का विचार दृढ़ हो रहा है।

रानी—भला।

साँव०—मुझको तुम डरपोक न समझना।

रानी—नहीं। कभी नहीं। मैं उचित समझती हूँ कि मैं एक बार इस पवित्र अग्नि-शिखा में और नहा लूँ। जिसमें वरांगना और शैलवती की डाह से जो मेरा हृदय काला हो गया है, साफ होकर आइने की तरह चमकने लगे। प्यारे! वह शिखा आई। एक एक घंटे के बाद इसकी लहर आती है। अब की बार मैं नहाती हूँ। दूसरी बार तुम स्नान करना। तीसरी बार अचरजसिंह की बारी होवेगी।

बारहवीं लहर

मैंने क्या देखा—देवी या दानवी?

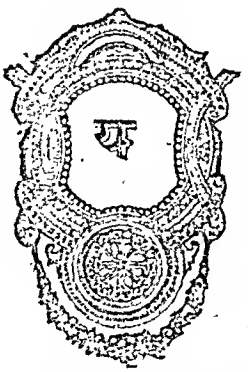

यह कह कर रानी ने अपने शरीर के सारे कपड़े उतार कर अपने लम्बे लम्बे एँड़ी तक लटकते हुए बालों से अपने शरीर को छिपा लिया। इस समय रानी बिलकुल "देवी" मालूम होती थी। उसको देख कर मैंने समझा कि मैं परिस्तान में खड़ा हूँ और देवी मेरे सामने खड़ी हुई है। इतने में वह आग की लहर भी पास आ गई और रानी वेखटके साँवलसिंह को प्यार से चूमकर

उसमें कूद पड़ी। मैंने देखा, उस अग्नि-शिखा ने उसके शरीर को कुछ भी नुकसान न पहुँचाया। वह उसी प्रकार नहा रही थी जैसे कोई ठंडे पानी में नहाता हो। वह अग्नि-शिखा भी उसके बदन में उसी प्रकार लपटी हुई थी, जैसे धोतियों में बाँकड़ी और लैस लगी रहती है। प्यारे पाठक ! मैं आप से क्या बयान करूँ ! वह सूरत मुझे ऐसी भली मालूम हुई और मुझमें उसके पुनर्वार देखने की ऐसी प्रबल इच्छा हुई, कि यदि कोई मेरा तन मन और धन भी उसके दिखलाने के लिए मांगे तो मैं देने को तैयार हूँ। रानी के दाँत उस समय हीरों की तरह चमक रहे थे। उसके बाल आबनूस की तरह थे और सूरत कुन्दन की तरह दमक रही थी।

मैं बड़े विस्मय के साथ बोल उठा,—"ओह ! ईश्वर की लीला भी क्या ही विचित्र है।"

छत०—मैं क्या कहूँ। इस समय तो ऐसा जान पड़ता है मानो मेरे सिर में पानी बह रहा है।

मैं—सिर और पानी ! ! ! बेवकूफ !

छत०—मैं इस समय मजाक नहीं करता हूँ। बड़े आश्चर्य की बात है, कि न मालुम मेरे पेट में क्यों ऐसा जान पड़ता है, मानो जैसे कोई मुर्ग पर फैला रहा है।

मैं—(हँसकर) तू अपनी दिल्लगी से बाज़ नहीं आता।

छत०—नहीं, नहीं, मैं दिल्लगी नहीं करता हूँ।

मैं—(आश्चर्य से) क्या सचमुच तेरा ऐसा हाल है ?

छत०—अरे ! मेरे हवास भी उड़े जारहे हैं।

मैं—ईश्वर खैर करे।

छत०—हैं! हैं! मेरे पाँव भी काँप रहे हैं।

मैं—ओफ! तेरा चेहरा भी उतर गया।

दो तीन मिनट तक तो मैं छतरलाल से बातें करता रहा। फिर जो उस शिखा की तरफ देखा तो रानी का रंग बदला हुआ पाया। मैंने देखा, उसकी आंखों में वह चमक नहीं रही। उसके कपोलों की अगली रंगत नहीं दिखलाई पड़ी; उसकी सूरत में वह दमक दृष्टिगोचर न हुई। इतनी ही देर में वह आग की लहर भी ठहर गई और रानी जहाँ की तहाँ खड़ी रह गई। अब जो मैंने देखा तो रानी को अपनी आंखों के सामने बूढ़िया बनते पाया। मैंने चमकित होकर आँखें मलनी आरम्भ की, क्योंकि, मैंने समझा शायद मेरी आंखों में फतूर आ गया है। इतने में रानी ने आवाज दे साँवलसिंह से कहा—"मेरे पास आ।" लेकिन इस बार की आवाज में वह अगला, मीठापन न रहा; किन्तु ऐसा जान पड़ा जैसे कोई नब्बे बरस की बुढ़िया पुकार रही है। साँवलसिंह ने भी रानी की ऐसी दशा देखी। उसका पैर थर्रा उठा और वह स्तम्भित होकर चुपचाप खड़ा रह गया।

रानी ने उसी आग की लपटों में से कहा,—"प्यारे! मुझे क्या हुआ? मेरी आंखों की रौशनी कहां गई? क्या इस आग की असर बदल गई? क्या अमरजीवन नाश हो सकता है? प्यारे देव! कहीं मेरी आंखों में कुछ पड़ तो नहीं गया?"

यह कहकर रानी ने अपने सिर पर हाथ रक्खा। हाथ रखते ही उसके तमाम बाल इस प्रकार सिर से झड़कर गिर पड़े जैसे किसी ने उन्हें उस्तुरे से मूंड़ कर गिरा दिया हो।

छत०—(चिल्लाकर) यह देखो ! यह देखो !! प्राण पखेरू उड़ गया ! बन्दर बन गया !

इतना कहने पर वह बेहोश हो जमीन पर गिर पड़ा और गिरतेही उसकी जान निकल गई। इस समय मैं स्वयं अपने आपे में न था। मुझमें और साँवलसिंह में इस समय इतनी ताकत भी न थी, कि उसको उठा लेते। उधर इसके थोड़ी देर बाद रानी का वह रंग भी उड़ गया। उसका रंग मैला ज़र्द दिखलाई पड़ने लगा और उसके शरीर के चमड़े पर इतनी झुर्रियां और झाइयाँ पड़ गईं कि जिनकी गिनती नहीं हो सकती।

अपनी यह दशा देखकर रानी ने एक चीख मारी और "मनि बिनु फनि" की तरह तड़फड़ा कर जमीन पर गिर पड़ी। धीरे धीरे उसकी कद घटने लगी। घटते घटते वह इतनी छोटी हो गयी जैसे छः महीने का बच्चा। पर सिर पूर्व की भाँति लम्बा चौड़ा था। इस समय उसकी शक्ल देखी न जाती थी। वह इतनी बदशकल दिखलाई पड़ने लगी कि शायद ही संसार में ऐसा कोई दिखलाई पड़े। थोडी देर बाद रानी ने अपने दोनों नन्हें नन्हें हाथों के बल खड़े होकर अपने बड़े सिर को इस प्रकार हिलाया, जैसे कोई कछुआ हिलाता हो। यद्यपि आँखों से उसे कुछ भी दिखलाई न पडता था तथापि उसकी आवाज अभी तक बनी थी। इसी से वह अपनी काँपती हुई आवाज में बोल सकी। वह बोली,—

"दे-दे-देवसिंह !"

मैं-(साँवलसिंह से) तुमको बुलाती हैं।

रानी-अब बोलते भी नहीं हो।

मैं–अरे यार, जवाब तो दो।

साँव०–क्या जवाब दूँ !

रानी–दे....व....सिं....ह।

मैं–उत्तर दो। देखो क्या कहती हैं।

साँव०–हाँ कहो, क्या कहती हो।

रानी–(बड़ी मुश्किल से) देव ! मुझे....भूल....न...जाना। मरी....दशा पर....दया करना। मैं मरती....नहीं, मैं....फिर.... आऊँगी ...फिर मैं रानी होऊँगी। मैं....कसम खाती....हूँ....यह सच है....बिलकुल....सच है....ओह !....ओह ! ! !

इसके बाद रानी मुंह के बल गिर पड़ा और ठंडी हो गई। जिस जगह वह गिरी थी वह वही स्थान था, जहां दो हजार वर्ष पहिले रानी ने देवसिंह को खंजर मारा था। यह दृश्य ऐसा भयानक था, कि मुझसे देखा न गया। मैं और साँवलसिंह दोनों वहीं गिर पड़े और बेहोश हो गये।

ईश्वर जाने मैं कितनी देरतक बेहोश पड़ा रहा। लेकिन जब मेरी आँखें खुली तो वह अग्निशिखा पुनः मेरे समीप से जा रही थी। मेरे पास ही छतरलाल का मृतशव पड़ा हुआ था। उसके थोड़ी ही दूर पर रानी भी सिकुड़े हुए चमड़े में मरी पड़ी थी। धीरे धीरे जब मेरे हवास ठिकाने हुए तो साँवलसिंह भी आंखें मलता हुआ उठ बैठा और उसने पूछा,– "क्या मैं सचमुच में जाग रहा हूँ ?"

मैं–और नहीं तो क्या ?

साँव०–वह रानी सब की मालिक कहाँ है ?

मैं–यह क्या सामने सिकुड़े हुए चमड़े में मरी पड़ी है।

साँव०–हैं, यह क्या ?

मैं–बस उसी अलख अगोचर परमात्मा की शक्ति का नमूना और क्या ?

साँव०–यह तो वही आग है। जिसमें उसने पहिले भी नहाया था।

मैं–हाँ, आग तो वही है। पर मेरी जान में इसकी तासीर यह है कि एक बार इसमें नहाने से अमर जीवन लाभ होता है। पर दूसरी बार स्नान करने से यह अग्नि अपनी शक्ति लौटा देती है।

साँव०–भला छतरलाल को तो उठाओ।

मैं–उसको क्या उठाऊँ। वह तो कभी का ठंडा हो चुका है।

साँव०–हाय ! क्या छतरलाल मर गया ?

मैं–हाँ, जान पड़ता है कि उसके दिमाग या पेट की कोई नस टूट गई।

साँव०–अब क्या करना चाहिये ?

मैं–बस ! यहां से निकलने की कोशिश।

साँव०–बड़ी मुश्किल है।

इतने ही में वह अग्निशिखा पुनः हरहराती हुई मेरे समीप से गई। उसके निकल जाने पर मैंने कहा,—"अब सोचने बिचारने का समय नहीं है। ईश्वर का नाम लो और यहां से चलने की तैयारी करो।

साँव०–यदि मुझे इस बात का विश्वास हो जाय कि इसमें नहाने से मृत्यु लाभ होगी तो मैं अभी कूद पड़ूँ। पर मैं डरता हूँ कि कहीं रानी की तरह मुझे भी न 'अमरजीवन' प्राप्त हो जावे। मुझसे यह नहीं हो सकेगा कि मैं रानी की तरह दो हजार साल तक जीता रहकर उसकी बाट देखूँ।

मैं तो यही उचित समझता हूँ कि किसी प्रकार मर जाऊँ और उससे जा मिलूँ। यदि तुम जीते रहने की इच्छा रखते हो तो कूद पड़ो और अमर हो जाओ।

सिर हिलाकर मैंने उत्तर दिया,-"नहीं।"

साँव०—देखें कब मौत आती है।

मैं—मुझसे तो यह नहीं हो सकता कि मैं यहाँ बैठे बैठे हाथ पर हाथ धरे मर जाऊँ। छिः यदि मरना ही है तो अपनी जननीजन्मभूमि में चलकर मरेंगे,-कुछ करके मरेंगे, सच्चा स्वार्थत्याग कर मातृभूमि के ऊपर न्योछावर होंगे। उठो, हिम्मत न हारो, स्वदेश-यात्रा के लिये तैयार हो जाओ।

साँव०—(कुछ उदास होकर) अच्छा एक बार यह अग्निशिखा मुझे और देख लेने दो। क्योंकि फिर यह देखना नसीब न होगा और ऐसा कभी सम्भव भी नहीं कि मृत्युलोक का कोई मनुष्य इसे देख सके।

अभी वह अपना मुँह बंद भी न किये था कि वह अग्निशिखा पुनः धुधकारी मारती सामने आई और जब वह चली गई तो सांवलसिंह ने रानी के गिरे हुए लम्बे लम्बे बालों को उठाकर चूमा। इस पर मैंने कहा,—"अहा! क्या खूबसूरत बाल हैं?"

यह सुनते ही "हाय!" कहकर साँवलसिंह बैठ गया और कहने लगा,-"मरती समय वह मुझे न भूलने की याद दिलाती गई है। अतः मैं भी उसे नहीं भूलूँगा। उसके सिरहाने खड़े होकर कसम खाता हूँ कि मैं भी उसे कभी नहीं भूलूँगा, बल्कि जब तक जीता रहूँगा उसकी बाट देखूँगा और तमाम उम्र शादी नहीं करूँगा।"

मैंने पूछा,–" यदि वह अपनी पूर्व लावण्यता में न आई तब ?

इसका साँवलसिंह ने कुछ जवाब न दिया। साथ ही मुझे चक्कर जान पड़ने लगा और मैं बेहोश हो कर गिर पड़ा। उसी बेहोशी में पुनः मेरे दिल में रानी के सौंदर्य और उसके कामों पर तर्क वितर्क होने लगा। पर मैं कुछ भी निश्चय न कर सका कि यह रही " देवी या दानवी ?"

तेरहवीं लहर

मेरी उछाल और किस्से का अन्त।

होश आने पर दोनों आदमी यानी मैं और साँवलसिंह उस छोटे लम्प को लेकर वहाँ से चल पड़े। किसी प्रकार ठोंकराते, गिरते उठते "अमरमंदिर" से तो निकल आये। पर सामने बड़ी कठिनाई दिखलाई पड़ी: मेरे मुह के सामने दो रास्ते थे। एक तो नीचे को गार की तरफ गया हुआ था और दूसरा पहाड़ों के ऊपर से। दोनों रास्ते ऐसे भयानक थे कि मेरे तो रोयें खड़े हो गये। पर साँवलसिंह की राय से दोनों आदमी ऊपर के रास्ते से चल पड़े। चलते चलते पहाड़ की भयानक और बहुत ही पतली पगडंडी मिली जो इतनी पतली और ऐसी ढालवी थी कि बड़ी मुश्किल से उस पर

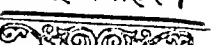

पैर ठहरता था। उस पर से गिरने पर रसातल की बहाने वाली नदी में ही जाना होता था।

चलते चलते एकाएक मेरा पैर फिसल पड़ा और मैं नीचे रसातलको जा रहा। पर इसके साथ ही साँवलसिंह ने मेरा बायाँ हाथ पकड़ लिया; मैं बीचही में झूलने लगा। बड़ी कठिनाइयों के उपरांत उसने फिर मुझे ऊपर खींच लिया। इसके बाद भी दोनों आदमी कई बार बाल बाल बचकर 'सत्यमन्दिर' में जा पहुँचे। जहाँ विल्लाली रानी के आज्ञानुसार बाट देख रहा था। जिस समय दोनों आदमी 'सत्यमंदिर' में पहुँचे उस समय दोनों में पैर उठाने की भी ताकत नहीं थी। 'सत्यमंदिर' में पहुंच ते ही दोनों गिर पड़े और बेहोश हो गये। थोड़ी देर के उपराँत मैं और साँवलसिंह ने आँखें खोलीं और ईश्वर के नाम पर इशारे से खानामाँगा। जिस समय दोनों आदमी के पेट में दाना और पानी गया, आँखें खुल गईं और हवास ठिकाने हुए तो विल्लाली ने मुझसे पूछा,—"ऐ बच्चे! तू और साँवलसिंह तो आ गये, पर रानी और छतरलाल कहाँ हैं?"

मैं—दोनों मर गये।

विल्ला०—क्या कहा? दोनों मर गये?

मैं—हाँ, दोनों मर गये।

विल्ला०—नहीं! वह कभी नहीं मर सकती, क्योंकि रानी को 'अमरजीवन' लाभ हो चुका है।

मैं—जो मैं कहता हूँ उसे ठीक मानो। इसमें जरा भी झूठ नहीं है।

बिल्ला०—अगर तुम्हारा कहना ठीक है तो तुम्हारे और साँवलसिंह के लिये बड़ा भय है।

मैं—क्यों ?

बिल्ला०—तमाम पहाड़ी तुम्हारे खून के प्यासे हो रहे हैं। वे रानी के डर से कुछ नहीं करते। यदि उनको यह मालूम हो जायगा कि रानी मर गई तो वे फिर तुम दोनों की बोटी बोटी काट डालेंगे।

साँव० हाँ तुम ठीक कहते हो।

मैं—फिर क्या करना चाहिये ?

बिल्ला०—मैं तो स्वयं ही परेशान हो रहा हूँ।

मैं—बिल्लाली ! मैंने तुम्हारी जान बचाई है। अब वह वक्त आया है कि तुम मेरा एहसान दूर करो, मुझे और साँवलसिंह को बचाओ।

बिल्ला०—मैं आपका एहसानमंद नहीं रहना चाहता। मैं भी उसी फिक्र में हूँ।

मैं—हाँ मुझे भी ऐसीही उम्मीद है।

बिल्ला०—मुझे तो उचित यही जान पड़ता है कि उस का मरना प्रकट न किया जाय।

मैं- दोनों आदमी आपकी आज्ञा में हैं। आप जैसा कहेंगे वैसाही होगा !

बिल्ला०—यही चाहिये भी। मैं रानी की तरफ से इन्हें आज्ञा दूँगा कि वे तुम्हें दलदल के पार छोड़ आवें। आगे तुम्हारा भाग्य !

मैं—ईश्वर तुम्हारा भला करे।

इसके बाद तीनों आदमियों ने जल्दी जल्दी भोजन किया। फिर पालकियों पर सवार होकर हमलोग रानी के राजधानी में पहुंचे। वहाँ से मैं अपना सामान लेकर मय साँवलसिंह के दो रक्षकों के साथ चल पड़ा। दयालु बिल्लाली भी हम दोनों को "हवशी के सिर" वाली गार तक पहुंचा गया।

उससे विदा होकर हम दोनों ईश्वर का नाम लेते हुए भाग्य के भरोसे चल पड़े। दलदलों में दोनों जने को भयानक विपद का सामना करना पड़ा। पर अभी मृत्यु नहीं थी। इससे जानमारू दुःख के पड़ने पर भी न मरे और लोटते पोटते उसके पार होही गये। वहाँ पहुंच कर वे दोनों रक्षक भी चले गये। इसके बाद मैं, साँवलसिंह के साथ डोंगी पर सवार होकर पश्चिम की तरफ चल पड़ा। दो सप्ताह तक तो मेरी डोंगी पानी पर इधर उधर जाती रही, सोलहवें दिन जहाज एक आता दिखाई पड़ा। मैंने पूछा,—

"साँवलसिंह! तुमने कुछ देखा?"

साँवल०—हाँ देखा; सचमुच में वह नाव मेरी ही तरफ आ रही है।

मैं—फिर हल्ला मचाओ और उसे अपनी तरफ बुलाओ।

मेरी यह बात सुनकर साँवलसिंह ने हल्ला मचाना प्रारम्भ किया। पर जब आवाज वहाँ तक पहुँचती न मालूम पड़ी तो उसने बन्दूक में अपना कोट बांध कर हिलाना आरम्भ किया। बड़ी देर के बाद उस जहाजवाले ने इशारे को समझा और उसी प्रकार झंडी हिलाकर खबर दी कि घबराओ नहीं आते हैं। लगभग चार घंटे के बाद वह जहाज समीप आया दोनों आदमी उसपर सवार हो गये। जहाज पर जाते ही

मेरी नाव चक्कर खाकर डूब गई और इस आखिरी बार भी दोनों आदमी बाल बाल बचे। इस छोटे स्टीमर (जहाज) में सवार होकर दोनों जने जंगबार में आये। फिर उसी के द्वारा कलकत्ते आ पहुँचे और खुशी खुशी अपनी मातृभूमि की सेवा के लिये काशी को चले गये।

उपसंहार

प्यारे पाठकों! जो कुछ मेरे ऊपर बीती और मैंने देखा था वह आपको सुना दिया। मेरी कहानी भी यहीं खत्म हो गई। अब मुझ को यह नहीं मालूम कि मेरा और मेरे प्यारे साँवलसिंह का क्या परिणाम होगा। यह कहानी आज दो हजार साल से चल रही है और ईश्वर जाने कबतक चलती रहकर मुझे अमरजीवन लाभ कराती रहेगी।

अब मेरे दिल में यह प्रश्न उठता है कि, क्या सचमुच साँवलसिंह अपने पूर्व पुरुष देवसिंह का अवतार था या रानी को धोखा हुआ था? दूसरा प्रश्न यह है कि यदि वास्तव में साँवलसिंह देवसिंह का अवतार था तो क्या शैलवती का सम्बन्ध वराङ्गना से था? इन दोनों सवालों के बारे में पाठकों को अधिकार है कि जो चाहे सो राय कायम करलें। मेरी राय में तो यही यथार्थ जान पड़ता है कि रानी भूली नहीं थी, उसकी राय ठीक और सही थी। पर आज तक मेरी समझ में यह बात न आई कि वह थी "देवी या दानवी?"

समाप्त

रखाला

एक अति उत्तम सामाजिक उपन्यास—मूल्य ॥।)

स्त्री शिक्षाकी सर्वोत्तम पुस्तक ।
१० चित्रोंसे सुसज्जितका मूल्य केवल ३) ।